चन्दामामा
मई १९७७

यही है ज़िंदगी के

(इस्टमनकलर, फिल्मसेन्टर द्वारा)

इन किरदारोमें हो सकता है आप अपनी तस्वीर पा सकें

हो सकता है आप आनन्द हो !

एक ऐसा बाप जो
अपने बच्चोंको दुनियाका
हर सुख देना चाहता है।
वो एक होशियार
और मेहनती मनुष्य है,
जो समजता है के मेहनत
और पैसोंसे दुनिया की हर
खुशी खरिदी जा सकती है।

हो सकता है आप गायत्री है !

एक पतिव्रता पत्नि
आदर्श माँ— मुश्किलोंसे
ना घबरानेवाली अक्कल से
अंत तक अपने पतिको
ज़िंदगी का अर्थ समझानेवाली
एक आदर्श नारी।

हो सकता है आप मधु या गोविंद हो !

वो गर्वशील संतान, जो समझते है के दुनिया की
हर चीज उनके कदमो में है, क्यूँ कि वो दौलत से
शक्तिशाली हैं।

हो सकता है आप कादरमियाँ हो !

एक अच्छा दोस्त और
फिलॉसॉफर।

हो सकता है आप कमला है !

एक जवान बेटी
जो हालातका डटकर
सामना करती है।

हो सकता है आप राधा है !

एक बहुत ही अच्छी
बहु...... घर में उसके
हँसने के साथ हँसी के
फूल खिलते है।

किरदार कोई भी हो,
उसके अपने में एक
भगवान होता है, जो
उसका रहबर और
रखवाहार होता है।

यही है ज़िंदगी

(इस्टमनकलर, फिल्मसेन्टर द्वारा)

जीस में अपने आपको देखने का अवसर ना खोईए।

एक अनुठी फिल्म— एक अनोखी कहानी।

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

हमने कई बार यह स्पष्ट कर दिया था कि चन्दामामा में प्रकाशनार्थ जो रचनाएं प्राप्त होती हैं वे अस्वीकृत हालत में बिना पर्याप्त डाक टिकट के नत्थी होने पर वापस नहीं की जायेंगी और इस संबंध में कृपया पत्र-व्यवहार न करें। स्वीकृत स्थिति में तत्काल सूचना भेज दी जाती है और प्रकाशन के पश्चात एक महीने के अन्दर पारिश्रमिक भेज दिया जाता है। कृपया उपर्युक्त निर्णय पर ध्यान देने का कष्ट करें।

इस संदर्भ में फोटो शीर्षक तथा कहानी-शीर्षक प्रतिभागियों से निवेदन है कि वे अपने उत्तर सिर्फ़ कार्ड पर ही भेजें, लिफ़ाफ़े में कृपया न भेजें।

वर्ष : २९ मई १९७७ अंक : ९

एक प्रति : १-२५ :: वार्षिक चन्दा : १५-००

आर्तोवा, यदिवा दृप्तः
परेषाम् शरणागतः
अरिः प्राणा न्परित्यज्य
रक्षितव्यः कृतात्मना ॥ १ ॥

[विपत्ति में फंसे अथवा घमण्डी शत्रु भी क्यों न हो, यदि शरण माँगता है तो अपने प्राणों का मोह त्यागकर उसकी रक्षा करनी चाहिए ।]

स चे द्भया द्वा, मोह द्वा,
कामा द्वापि न रक्षति
स्वया शत्तया यथासत्वम्
तत्पापम् लोक गर्हितम् ॥ २ ॥

[भय, अज्ञान अथवा काम के कारण ही सही यदि कोई शरण माँगता है तो उसकी शक्ति भर रक्षा करनी चाहिए, नहीं तो वह पापी निंदा का पात्र होगा ।]

विनष्टः पश्चत स्तस्या
रक्षिण श्शरणागतः
आदाय सुकृतम् तस्य
सर्वम् गच्छे दरक्षितः ॥ ३ ॥

[जो व्यक्ति शरणागत की रक्षा नहीं करता, वह पूर्वार्जित पुण्य को खो बैठता है ।]

शरणागत की रक्षा

काकोलूकीयम

[४६]

विष्णुशर्मा ने राजकुमारों से यों कहा: "शत्रु यदि मित्र के रूप में अभिनय करता है तो उस पर विश्वास नहीं करना चाहिए। ऐसे कपट मित्र की मदद से कौओं ने उल्लुओं के घोंसले को जला डाला है।"

"सो कैसे?" राजकुमारों ने पूछा।

इस पर विष्णुशर्मा ने उन्हें काकोलूकीयम की कहानी सुनाई:

* * *

दक्षिण देश के एक महारण्य में एक विशाल वट वृक्ष था। उस पर मेघवर्ण नामक कौओं का राजा अपने दल के साथ निवास करता था।

वहाँ से एक कोस की दूरी पर एक पहाड़ी घाटी की गुफा में अरिमर्दन नामक उल्लुओं का राजा अपने अनुचरों के साथ निवास किया करता था। कौओं के साथ उसकी गहरी दुश्मनी थी। उल्लुओं का राजा तथा उसके अनुचर जहाँ भी कौए दिखाई देते तो उन्हें निर्दयतापूर्वक मार डालते। इस कारण वट वृक्ष के चारों तरफ़ प्रति दिन कई कौए मरे पड़े दिखाई देते।

एक दिन कौओं के राजा ने अपने मंत्रियों तथा सलाहकारों को बुलाकर यों समझाया: "बुजुर्गो, आप लोग अच्छी तरह से जानते हैं कि रात के समय जब हम गहरी नींद सोते हैं तब हमारा शत्रु हमें अपार नुक़सान पहुँचा रहा है। यह बात सच है कि दिन के वक़्त उल्लू देख नहीं पाते हैं। मगर उस वक़्त वे अपनी पहाड़ी गुफाओं में सुरक्षित होते हैं। कहा जाता है कि शत्रु और व्याधि को भी बढ़ने

देना प्राणों के लिए खतरनाक है। इसलिए यदि हमें जिंदा रहना है तो हमें इस जटिल समस्या का सामना करना होगा। इसके लिए कुल छे उपाय हैं: दुश्मन के साथ समझौता करना, दुश्मन के साथ युद्ध करना, हमारे निवास को बदल डालना, हमारे निवास को मजबूत बनाना, शक्तिशाली मित्रों को प्राप्त करना अथवा युक्ति या धोखे से कार्य को सफल बनाना। इसका निर्णय करने के लिए मैं गुप्त मंत्रणा का प्रबंध कर रहा हूँ।" यों समझाकर कौओं के राजा ने उज्जीवी, संजीवी, अनुजीवी, प्रज्जीवी और चिरंजीवी नामक अपने मंत्रियों तथा स्थिरजीवी नामक वृद्ध सलाहकार के साथ मंत्रणा की।

उज्जीवी ने यों कहा–"राजन, हमारा शत्रु बड़ा ही शक्तिशाली है। जब तक हम बलवान नहीं बनेंगे, तब तक हमें दुश्मन के सामने सर झुकाना ही होगा। प्राणों के लिए खतरा उत्पन्न होने की स्थिति में बलवान तथा दुष्टों के साथ भी शांति के प्रयत्न करने होंगे। युद्ध तो जुए के समान है। विवशता की स्थिति में ही युद्ध करना होगा। इसलिए मेरा सुझाव है कि जहाँ तक हो सके, अपने लिए अनुकूल शर्तों के साथ समझौता करना उचित है।"

इस पर संजीवी ने अपना विचार यों प्रकट किया: "जो शत्रु नीति एवं न्याय का पालन नहीं करता, ऐसे दुष्ट के साथ शांति या समझौते का सवाल ही नहीं

उठता। वे अगर जो भी समझौता करेंगे, वे हमारा सर्वनाश करने के लिए ही करेंगे। इसलिए मेरी दृष्टि में युद्ध ही एक मात्र उपाय है। युद्ध से बचने का प्रयत्न करना आत्मविनाश को मोलने के समान है।"

"हमारा शत्रु पापी है, बलवान है, इसलिए उसके साथ न हमें युद्ध करना है और न समझौता ही। हम अपना निवास बदल डालेंगे। उल्लुओं के इतने समीप में रहना खतरे से खाली नहीं है। हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि हम यदि अपने निवास को बदल देते हैं तो पलायन कर रहे हैं। हम समय पर फिर लौट आयेंगे।" अनुजीवी ने अपना सुझाव दिया।

"अपने निवास को त्यागना मैं पसंद नहीं करता। इसी में हमारी ताक़त होती है। मगरमच्छ पानी के भीतर रहकर हाथी पर विजय प्राप्त कर सकता है, लेकिन बाहर आने पर वह एक कुत्ते का भी सामना नहीं कर पाता। अगर हम इस स्थान को छोड़कर चले जाते हैं तो पुनः यहाँ पर लौट आना असंभव है। इसलिए मैं मानता हूँ कि यदि हममें एकता है तो कोई भी हम पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता।" प्रज्जीवी ने स्पष्ट कहा।

"हमें तो बलवानों की मैत्री चाहिए। मित्रों की सहायता लेना कोई बुरी बात नहीं है। समस्त को नाश कर सकनेवाली आग भी हवा की सहायता का तिरस्कार नहीं करती। परंतु हम यदि अपने इसी निवास पर रहेंगे, तभी हमें दूसरों की मित्रता प्राप्त हो सकती है। हमारी शक्ति देखकर ही दूसरे लोग हमारी सहायता करते हैं। दवानल को मदद पहुँचानेवाली हवा छोटी-सी ज्वालाओं को बुझा देती है न?" चिरंजीवी ने सुझाया।

मंत्रियों के विचार सुनने के बाद कौओं के राजा मेघवर्ण ने स्थिरजीवी से पूछा—"महाशय, आप वृद्ध और बुद्धिमान हैं। अब आप कृपया अपना विचार बताइए।"

१८४. कांस्य युग की सस्यदेवी

मानव ने संचार जीवन से कृषि जीवन को अपनाकर जब स्थिर निवास बनाया तब सस्यदेवताओं की पूजा प्रारंभ हुई । सिरिया के "रसषम्रा" के पास स्थित राज परिवार की समाधियों में यह सुंदर दंत खिलौना प्राप्त हुआ है । यह गहनों की पेटी के ढक्कन के रूप में इस्तेमाल होता था ।

माया सरोवर

[१६]

[जयशील का बाण नर वानर को जा लगा। उस वक़्त कृपाणजित ने भांप लिया कि बाण चलानेवाला व्यक्ति उसका शत्रु जयशील है। दूसरे ही क्षण वह शंकरसिंह के अनुचरों के साथ बस्ती की ओर भाग गया। इस पर शंकरसिंह ने उसका मजाक़ उड़ाया। तब कृपाणजित ने अपने नर वानर को उस पर उकसाया। बाद...]

शंकरसिंह के अनुचर अपने हथियार लिए कृपाणजित की ओर बढ़े, इस पर वह भय विह्वल हो उठा। भले ही वे लोग नाटे क्यों न हो, पर वह अकेला था। उसे लगा कि अपने नेता की रक्षा करने के प्रयत्न में वे लोग मर मिटने के लिए तैयार हैं।

हालत को भांपकर कृपाणजित तत्काल एक निर्णय पर पहुँचा। मुस्कुराते हुए उसने अपने चारों तरफ़ घेरनेवाले नाटे दल को देखा और बोला—"तुम लोग जल्दबाजी न करो। मैं तुम्हारा मित्र हूँ। मैंने केवल यह दिखाने के लिए नर वानर को तुम्हारे नेता पर उकसाया कि मैं तुम्हें दिखला दूँ कि कैसे मैंने उसे प्रशिक्षण दिया है।" इन शब्दों के साथ कृपाणजित ने शंकरसिंह को नर वानर की पकड़ से बचाया।

शरीरवाला अपने नर वानर के निकट खड़े हो आँखें तरेरते हुए हमारी ओर देख रहा है, वह यह जानना चाहता है कि हम लोग उसके साथ क्या करने जा रहे हैं। यह बात साफ़ है कि उसके साथ टक्कर लेकर हम लोग कदापि विजयी नहीं हो सकते। इसलिए हमें उसकी तलवार तथा उसके नर वानर को उससे दूर करना होगा। इस प्रयत्न में हम में से कुछ लोग भले ही मर जायें, पर उसका वध करके सदा के लिए हम उसका पिंड छुड़ा सकते हैं।"

शंकरसिंह जान के डर से कांपते हुए दूर एक झोंपड़ी के सामने जा पहुँचा, वहाँ पर पड़े एक सूखे लक्कड़ पर जा बैठा। उसके अनुचरों ने घेरकर उससे पूछा—"सरकार, अब बताइए, हमारा आगे का कार्यक्रम क्या है?"

शंकरसिंह ने भलीभांति यह समझ लिया कि कहीं से आनेवाले इस महाकाय की मदद माँगकर उसने खुद कैसी आफ़त मोल ली है।

उसने सर उठाकर एक बार अपने अनुचरों की ओर दृष्टि दौड़ाई, तब क्षीण स्वर में बोला—"मेरी बातों को तुम लोग सावधानी से सुन लो। वह भारी

"यह योजना तो बड़ी अच्छी है, मगर इसे कैसे अमल किया जाय?" एक अनुचर ने पूछा।

"इस महाकाय की मृत्यु के बाद नाटी जाति की रानी बड़ी आसानी से हम सब का अंत कर सकती है। उल्टे राक्षस जैसे दो महान वीर उस दुष्ट नारी की मदद के लिए तैयार बैठे हैं।" दूसरे ने शंका प्रकट की।

शंकरसिंह ने अपने उन दो अनुचरों की ओर क्रोध भरी दृष्टि दौड़ाते हुए कहा—"अगर हमारी मौत निश्चित है तो हम अपनी ही जाति के लोगों के हाथों में ही मर जायेंगे। इसी में हमारी प्रतिष्ठा है। अलावा इसके अब हम उस रानी

के पास जाकर उसके प्रति अपना विश्वास प्रकट करे तो मेरा ख्याल है कि वह ज़रूर हमें क्षमा कर सकती है। इसके अतिरिक्त मुझे कोई दूसरा उपाय नहीं सूझ रहा है।"

"तब देरी ही क्यों? वह काम हम लोग अभी करेंगे।" एक ने उच्च स्वर में कहा।

शंकरसिंह ने निकट पड़ी हुई लाठी लेकर उसे दे मारा। दूर पर खड़े यह तमाशा देखनेवाले कृपाणजित ने सोचा कि शंकरसिंह अपने अनुचरों के साथ हठात् उस पर हमला करने की योजना बना रहा है, फिर नर वानर को रस्से की मदद से खींचते उनके निकट आया और दांत किटकिटाते बोला–"तुम लोग इस वक़्त कैसा षड़यंत्र कर रहे हो? अचानक मुझ पर हमला करके मेरा वध करना चाहते हो न? सच-सच बता दो, वरना तुम लोगों की खैर नहीं है।"

शंकरसिंह ने देखा कि कृपाणजित की धमकी देख उसके अनुचर उत्तेजित हो रहे हैं और तत्काल वे अपनी जान का मोह त्यागकर उस पर टूट पड़नेवाले हैं, इसलिए उसने हाथ हिलाकर अपने अनुचरों को शांत रहने का संकेत किया, ठूँठ पर से उठकर खड़े हो बोला– "महाशय, हम कोई षड़यंत्र नहीं रच रहे हैं। इस वक़्त हमारी हालत ऐसी है कि नाटी जाति की रानी या आप–जो भी चाहेंगे, मिनटों में हमारा वध कर

सकते हैं। इसलिए हम सोच रहे हैं कि सूर्यास्त के पहले ही इस बस्ती को छोड़ दूर किसी जंगल में भाग जाये।"

शंकरसिंह के मुँह से ये बातें सुन कृपाणजित घबरा उठा। उसे वे सारी बातें याद हो आईं, जब कि उसने इस बस्ती में आने के पूर्व स्वयं झेली थीं। उस वक़्त यदि ये नाटे लोग समय पर उसकी मदद न करते तो उसका प्रबल शत्रु जयशील उन जंगलों में ही उसका अंत कर देता।

यों सोचकर कृपाणजित ने शंकरसिंह से नम्र शब्दों में कहा—"शंकरसिंह, तुम भलीभांति विश्वास करो कि मेरे द्वारा तुम्हारा उपकार ही होगा, पर कभी तुम्हारी हानि न होगी। तुम्हारी दुश्मन रानी तथा उसकी मदद करने आये हुए मेरे दोनों शत्रुओं का सूर्योदय के पूर्व ही मैं वध कर डालूँगा। आज अर्ध रात्रि के समय तुम में से कुछ लोग मेरी मदद के लिए आ जाओ और मुझे रानी की बस्ती का मार्ग बतला दो। हमारे सभी शत्रुओं का सोते वक़्त ही मैं और मेरा नर वानर—हम दोनों संहार कर बैठेंगे। इसके बाद तुम उतने प्रदेश में फैले जंगल और पहाड़ों का राजा बन जाओगे, जितनी दूर तक तुम्हारी दृष्टि जाती है; समझें? महाराजा शंकरसिंह की जय!" चिल्लाते उसने नर वानर को तलवार की मूठ से दे मारा।

नर वानर पीड़ा और क्रोध के मारे भीषण गर्जन कर उठा। फिर प्रतिशोध लेने की भावना से वह दांत पीसते कृपाणजित को अपनी पकड़ में लेने हाथ बढ़ाने को हुआ, पर उसके हाथ में चमचमाती तलवार देख वह सहम गया और एक क़दम पीछे हटा।

शंकरसिंह ने प्रसन्नतापूर्वक सिर हिलाकर कहा—"महाशय, मुझे ऐसा मालूम होता है कि आप अपने पालतू वानर पर थोड़ी और सहानुभूति दिखायेंगे तो वह कभी आप का विरोध न करेगा।"

"छी छी:! इस गुलाम जानवर के प्रति सहानुभूति दिखाऊँ? ऐसा करूँ तो वह मिनटों में मेरा मालिक बन बैठेगा। इस दुनिया मे लाठी के सामने न झुकनेवाला कोई भी प्राणी नहीं है। जो भी शासन होता है, लाठी के बल पर ही होता है। समझें! अच्छा, यह बताओ, हमारे खाने का क्या इंतज़ाम है? में अपनी कुटी में जा रहा हूँ।" यों कहते कृपाणजित वहाँ से निकलने को हुआ।

"आप का खाना वहाँ पर तैयार है।" शंकरसिंह ने जवाब दिया।

इसके बाद कृपाणजित बस्ती से थोड़ी दूर पर निर्मित अपने निवास के निकट पहुँचा, मुड़कर उच्च स्वर में बोला–"सूर्यास्त होने तक तुम लोगों में से कोई भी मेरी निद्रा में विघ्न न डालो। मुझे आज रात भर जागना होगा! ठीक आधी रात के वक़्त हमारे दुश्मनों का संहार होगा।"

कृपाणजित के अपने निवास में जाने पर शंकरसिंह अपने अनुचरों से बोला–"तुम लोग भलीभांति कान खोलकर सुनो! वह नर बानर खतरे के समय उसका साथ न देगा। वह ज़रूर भाग जाएगा। अब उसकी तलवार की बात ठहरी! उसे हमें पहले ही हड़पना होगा।"

यों समझाकर चार-पाँच विश्वास पात्र एवं साहसी युवकों को अपने साथ ले शंकरसिंह अपने निवास में चला गया।

दो-तीन घंटे बाद कृपाणजित अचानक जाग उठा, बोला–"उफ़! तेल की यह कैसी गंध है? अबे, सुनो, कोई है बाहर? सड़े एरंड़ी के तेल की यह बदबू कहाँ से आ रही है!"

दूसरे ही क्षण बाहर से कोई जवाब सुनाई दिया–"महाशय, यह एरंड़ी के तेल की गंध नहीं। नीम के तेल में सफ़ेद तिल को मिलाकर बनाये गये तेल की गंध है। हमारे नेता ने आदेश दिया है कि

रात को कीड़े-मकोड़े और मच्छरों के द्वारा आप को कष्ट न हो और आप की निद्रा में खलल न पड़े, इस वास्ते आप की झोंपड़ी के ताड़ पत्रों पर तेल छिड़का दे।"

"ओह, ऐसी बात है!" इन शब्दों के साथ ज़ोर से जंभाइयाँ ले उसने फिर से आँखें बंद कीं, मगर झोंपड़ी के भीतर ज़बर्दस्त लोहे की जंजीर से बंधा नर वानर उस गंध को सहन न कर पाया। जंजीर को तोड़ भागने के प्रयत्न में वह खींचातानी करने लगा।

कृपाणजित गाढ़ निद्रा में खुर्राटे ले रहा था। तब शंकरसिंह अपने थोड़े अनुचरों के साथ वहाँ पहुंचा। उसका संकेत पाकर एक अनुचर झोंपड़ी का द्वार खोल भीतर गया और कृपाणजित की तलवार चुपके से उठा ले आया।

शंकरसिंह ने तलवार को उलट-पलटकर देखा फिर उसे अपने अनुचर के हाथ सौंपते हुए बोला—"इस महाकाय की नींद की खुमारी झोंपड़ी के जलने पर ही जाती रहेगी! हम इस तलवार को ढो सकते हैं, पर इसे हम अपने आयुध के रूप में काम में नहीं ला सकते। इसे कहीं छिपा रखो।"

इसके बाद अपनी पूर्व योजना के अनुसार शंकरसिंह के अनुचर भाले लेकर वहाँ आ पहुँचे। उनमें कुछ भेड़ों के सवार भी थे। शंकरसिंह ने सब लोगों को एक बार देखा और कहा—"अब हमें इस बात का फ़ैसला करना होगा कि या तो हम लोग अपनी जान दे या इस महाकाय की जान ले। तुम लोग अब बिना विलंब किये झोंपड़ी के चारों ओर आग लगा दो। अगर महाकाय प्राणों के साथ बाहर निकलेगा तो उस पर भालों का प्रहार कर दो। नर वानर मेरे ख्याल से लोहे की जंज़ीर तोड़कर झोंपड़ी के बाहर नहीं निकल सकता। वह वहीं पर आग में झुलसकर मर जाएगा।"

अपने नेता का आदेश पाकर चार नाटे अनुचरों ने जलनेवाले मशाल ले जाकर

झोंपड़ी के चतुर्दिक आग लगा दी। झोंपड़ी पहले से ही एरंडी के तेल से भीगी थी, इसलिए धक् धक् करते जल उठी। आग की लपटें चारों ओर फैल गईं।

कृपाणजित आग की लपटों के स्पर्श से जाग उठा। उसने आँखें खोलकर देखा, झोंपड़ी को जलते देख जान के डर से चीख उठा–"यह तो सरासर धोखा है, दगा है! मैं इसका बदला लूंगा।" इन शब्दों के साथ वह अपनी तलवार को टटोलने लगा, मगर उसे तलवार दिखाई नहीं दी।

कृपाणजित थर-थर कांपते हुए सोचने लगा कि क्या किया जाय। तभी जलनेवाला ताड़ का एक पत्ता उस पर गिर पड़ा। नर वानर भीषण रूप से गरज उठा और अपनी सारी ताक़त लगाकर जंज़ीर को खींच लिया, जिससे उसकी कमर में बंधी लोहे की जंज़ीर टूट गई। वह कृपाणजित पर हमला करने को हुआ, पर अपने चतुर्दिक फैलनेवाली लपटों को देख घबरा कर द्वार की ओर भाग गया।

कृपाणजित ने सोचा कि अब उसकी मौत निश्चित है, इसलिए साहस करके उसने नर वानर की कमर से लटकनेवाली जंज़ीर को थाम लिया। वानर एक छलांग में द्वार तक पहुंचा, किवाड़ों को तोड़कर बाहर कूद पड़ा। कृपाणजित भी लटकते जाकर झोंपड़ी के बाहर जा गिरा। उस वक़्त जंज़ीर उसके हाथ से फिसल गई। अचानक नर वानर तथा

उसके पीछे कृपाणजित को जलनेवाली झोंपडी से बाहर निकले देख शंकरसिंह तथा उसके अनुचर भय कंपित हो उठे। मगर उस वक़्त कृपाणजित बेहथियार था। नर वानर तो मौक़ा मिलने पर जंगलों में भागने की कोशिश कर रहा था।

शंकरसिंह ने हिम्मत बटोरकर भागने की कोशिश करनेवाले अपने अनुचरों को सावधान करते हुए कहा–"अबे, नर वानर को अपने रास्ते भागने दो; लेकिन इस दुष्ट कृपाणजित को प्राणों के साथ मत छोड़ो। भालों से चुभो दो।"

अपने नेता की चेतावनी पाकर नाटे सिपाहियों की हिम्मत बंध गई। उस वक़्त नर वानर नाटे सिपाहियों को पकड़-पकड़कर दूर फेंकने लगा। उनमें से कुछ लोग भागने की कोशिश करने लगे तो कुछ लोग हिम्मत करके नर वानर पर भालों का प्रहार करने लगे।

इस हलचल में कृपाणजित को अच्छा मौक़ा मिल गया। उसने इधर-उधर नज़र दौड़ाई कि कहीं शायद उसके हाथ कोई हथियार लग जाय! एक जगह उसे लंबी सूखी डाली दिखाई दी। झट से उसने वह डाली उठाई और शंकरसिंह के अनुचरों पर अंधा-धुंध उसका प्रहार करने लगा। नाटे सिपाही भी प्राणों का मोह छोड़कर कृपाणजित का सामना करते अपने भालों से उसे घायल करने लगे।

नाटी जाति की बस्ती में उठनेवाली लपटों, धुआ तथा चिल्लाहटों को निकट के जंगल में स्थित दो विचित्र मनुष्यों ने सुना। वे घोड़े जैसे दो अद्भुत जानवरों पर सवार थे। उन जानवरों के शरीर मछली के चमड़े की परत जैसी चीज़ों से ढके थे। देखने में वे वाहन मकरकेतु का वाहन जलग्रह जैसे थे। दोनों सवार मछली के चमड़े के ऊपर की परत से सिये हुए वस्त्र धारण किये हुए थे। उनकी कमरों में लंबी तलवारें लटक रही थीं।

(और है)

देशाटन

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, श्रम से भरा यह काम तुम्हें तुम्हारे पिता ने नहीं सौंपा है न? क्योंकि कुछ ऐसे पिता हैं जो अपने पुत्रों को कष्ट देकर ही तृप्त हो जाते हैं। इसके उदाहरण के रूप में मैं तुम्हें कलिंग के राजा गुणशेखर की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: कलिंग राज्य के शासक गुणशेखर का इकलौता पुत्र राजशेखर था। राजशेखर युक्त बयस्क के होते-होते सभी विद्याओं में पारंगत हो गया। आचार्यों ने पूर्ण संतोष व्यक्त किया कि राजशेखर का ज्ञान परिपूर्ण हो गया है। राजा ने सोचा कि राजकुमार ने

वेताल कथाएँ

जो ज्ञान प्राप्त किया, उसके साथ पर्याप्त अनुभव भी प्राप्त करे तो उसके अनंतर वह योग्य राजा के रूप में लोकप्रिय होगा। इस ख्याल से राजा ने राजशेखर को देशाटन पर जाने की सलाह दी।

अपने पिता की सलाह से राजशेखर अकेले पूर्वी दिशा की ओर चल पड़ा। राजा ने राजशेखर के पीछे गुप्तचरों को भेजकर उन्हें आदेश दिया कि ज़रूरत पड़ने पर वे उसकी सहायता करे।

राजशेखर नये प्रदेश तथा नये प्राकृतिक दृश्यों को देखते एक दिन संध्या के समय तक एक जंगल में पहुँचा। वह सोच ही रहा था कि अब क्या किया जाय, तभी उसे अस्पष्ट रूप में किसी की कराहट सुनाई दी। उस दिशा में जाकर राजकुमार ने भूगर्भ में सीढ़ियाँ देखीं। वह उन सीढ़ियों से होकर नीचे उतरा। वहाँ पर एक पाताल भैरवी की प्रतिमा तथा उसके सामने एक खंभे से बंधी युवती दिखाई दी। प्रतिमा के सामने एक छोटा-सा दीपक जल रहा था। खंभे से बँधी वह युवती कराह रही थी। राजशेखर ने पूछा—"तुम कौन हो? किसने तुमको इस खंभे से बांध दिया है?"

"मैं मालव देश की राजकुमारी हूँ। मेरा नाम मणिमाला है। एक मांत्रिक के इकलौती बेटी थी जो किसी कारणवश मर गई। मांत्रिक का यह विश्वास था कि उसकी कन्या के जन्म-नक्षत्र में पैदा हुई कन्या को काली माता की बलि दी जाय तो उसकी कन्या जीवित हो उठेगी। मेरा जन्म-नक्षत्र भी मांत्रिक की कन्या का जन्म-नक्षत्र था, इसलिए वह मांत्रिक मुझे यहाँ पर ले आया है। वह आज रात को मेरी बलि देनेवाला है।" उस युवती ने समझाया।

"तुम्हें डरने की कोई आवश्यकता नहीं, मैं उस मांत्रिक से तुम्हारी रक्षा करूँगा।" यों समझाकर राजशेखर एक दूसरे खंभे के पीछे छुप गया।

थोड़ी देर बाद वहाँ पर एक मांत्रिक आ पहुंचा। देवी की प्रतिमा के सामने बैठकर उसने मंत्रोच्छाटन प्रारंभ किया। राजशेखर तलवार खींचकर खंभे की आड़ से बाहर आया और मांत्रिक का सर काट डाला। इसके बाद उसने मणिमाला के बंधन खोल दिये और उस युवती को अपने घोड़े पर बिठाकर मालव देश चला गया।

मालव राजा ने राजशेखर के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की और मणिमाला के साथ वैभवपूर्वक उसका विवाह संपन्न किया। इसके उपरांत राजशेखर अपनी पत्नी को साथ लेकर अपने देश को लौटा। सारा वृत्तांत अपने पिता को सुनाया। राजा बहुत ही प्रसन्न हुआ।

थोड़े दिन बाद राजा ने अपने पुत्र को बुलाकर कहा–"मैं तुम्हारे देशाटन से अधिक संतुष्ट नहीं हूँ। तुम एक बार और देशाटन करके लौट आओ।"

अपने पिता का आदेश पाकर राजशेखर इस बार पश्चिमी दिशा की ओर चल पड़ा। इस बार भी राजा गुणशेखर ने गुप्त रूप से अपने पुत्र के पीछे गुप्तचरों को भेजा।

इस यात्रा में राजशेखर ने परती जमीन तथा कंकाल जैसे दुर्बल व्यक्तियों को देखा। इस पर उसे बड़ा दुख हुआ।

दल बांधकर प्रवास में जानेवाले लोग उसके सामने से गुजरे। उन लोगों ने बताया कि उनके देश में अकाल का तांडव हो रहा है, तिस पर भी उनका राजा कर बढ़ाकर उन्हें सता रहा है। इसके बाद राजशेखर ने फिर अपनी यात्रा चालू रखी, एक गाँव में जा पहुंचा। वहाँ के किसानों को कर न चुकाने की हालत में राजा के सैनिक सता रहे थे। उस दृश्य को देखने पर राजशेखर का खून खौल उठा। इस पर राजशेखर उस देश के राजा से मिला और उसके शासन की कड़ी आलोचना की।

उस मूर्ख राजा ने राजशेखर पर क्रुद्ध हो उसे कारागार में बन्दी बनाया। यह

समाचार गुप्तचरों के द्वारा राजा गुणशेखर को मिला। राजा ने तत्काल एक बड़ी सेना लेकर उस देश पर आक्रमण किया। उस दुष्ट राजा का संहार करके राजशेखर को कारागार से मुक्त किया और उस देश पर उत्तम शासन का प्रबंध किया।

इसके बाद राजा गुणशेखर ने अपने पुत्र के दूसरे देशाटन के प्रति अपना पूर्ण संतोष व्यक्त किया और युवराजा के रूप में उसका राज्याभिषेक किया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, मेरा एक संदेह है! गुणशेखर ने अपने पुत्र के प्रथम देशाटन पर संतोष क्यों न पाया? वह यात्रा तो सुखपूर्वक संपन्न हुई, साथ ही राजशेखर को एक सुंदर पत्नी भी प्राप्त हुई थी। पर दूसरी यात्रा ने राजकुमार को अनेक यातनाएँ दीं, फिर भी राजा उस यात्रा से क्यों पूर्ण संतुष्ट हुआ? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकटे-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने उत्तर दिया– "राजा ने अपने पुत्र को देशाटन पर इसलिए नहीं भेजा कि उसका पुत्र सुख पूर्वक यात्रा करके लौटे और सुंदर पत्नी को प्राप्त करे। बल्कि इसलिए भेजा था कि भावी राजा के लिए आवश्यक अनुभव प्राप्त करे। मगर राजशेखर की प्रथम यात्रा में उसे ऐसा कोई अनुभव प्राप्त नहीं हुआ, उसे जो कुछ अनुभव प्राप्त हुआ, वह केवल व्यक्तिपरक था। लेकिन दूसरी यात्रा में उसने जो अनुभव प्राप्त किया, वह अत्यंत मूल्यवान था। उसने इस यात्रा के दौरान न केवल जनता के कष्टों को देखा, साथ ही उसने उनके संबंध में एक योग्य शासक के जैसा व्यवहार भी किया। जनता के पक्ष में नेतृत्व किया, इसीलिए यह यात्रा उसके पिता के लिए संतोष का कारण बना।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

अंकुरण
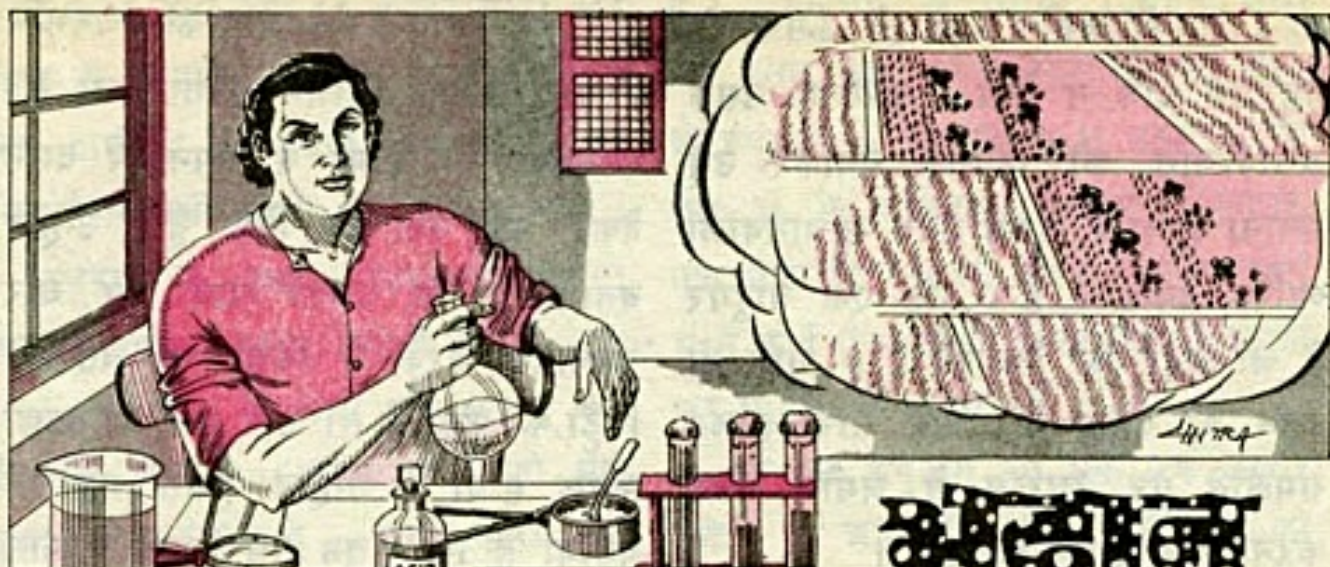
फुलपुर के गाँव के बाहर बंजर पड़ी एक मैदान जैसी जमीन थी। लोग कहा करते थे, शापवश उस जमीन की यह हालत हो गई है। क्योंकि एक समय था, जब उस जमीन में सोने की सी फ़सल होती थी। एक बार बाढ़ आ गई, जिसके कारण वह बंजर हो गई और खेती के लायक़ न रही। उसमें बोये गये बीजों से अंकुर न फूटे। वहाँ पर कांटों के पेड़ और दूब उग आई।

वह जमीन उसी गांव के निवासी रघुराम की थी। वह धनी था, पर कंजूस था।

उस गाँव के धनी किसान का लड़का रतन था जो कृषिशास्त्र का विशारद बनकर गांव को लौटा था। जब भी वह उस बंजर को देखता तब उसका दिल कचोट उठता। इतनी सारी जमीन का बेकार जाना उसे कतई पसंद न था। अगर उसे मकान बनाने के काम में लाने का प्रयत्न भी किया जाय तो गाँव में ऐसा कोई आदमी न था जिसका अपना कोई मकान न हो। इसलिए उस जमीन को किसी न किसी प्रकार खेती के लायक़ बनाना ही एक मात्र रास्ता था।

रतन ने उस जमीन की थोड़ी-सी मिट्टी ले जाकर कृषि विभाग के अधिकारियों द्वारा जांच कराई। अधिकारियों ने सलाह दी कि उसमें एक किस्म के रसायनिक पदार्थ की कमी है, उसे खाद के साथ मिलाकर खेत में छिड़काया जाय तो उस भूमि में अच्छी पैदाहर हो सकती है। उसके मन में यह विचार आया कि उस जमीन को किसी न किसी उपाय से रघुराम के द्वारा दान लेकर गांव के गरीब किसानों में बांट देना चाहिए। मगर रघुराम दान देने की प्रवृत्ति नहीं रखता

ए. सी. सरकार, जादूगर

था। उसकी जमीन भले ही ऊसर हो, वह उसे दान न देगा। इसलिए उसके अंधविश्वास को आधार बनाकर उसे मनाना होगा। इसमें मदद पहुंचानेवाला व्यक्ति देवाशीस है। वह एक जादूगर है जो शहर का निवासी है। साथ ही रतन का दोस्त है। उसे सारी हालत समझाने पर रघुराम से जमीन प्राप्त करने का कोई तंत्र बताएगा।

यों विचार करके एक दिन सवेरे रतन ने रघुराम के घर जाकर उसके कुशल-समाचार पूछा। रघुराम ने कहा–"भाई, हम तो खूब स्वस्थ और सानंद हैं। पर यह बताओ, इतने सवेरे आ धमके हो बात क्या है?"

"महानुभाव! मैंने आप की बंजरभूमि के बारे में एक विचित्र सपना देखा है। सस्यदेवी महालक्ष्मी ने सपने में दर्शन देकर मुझे एक वर दिया है। उन्होंने बताया है कि उनका नाम दस बार उच्चारण करके मैं किसी भी खेत की मिट्टी को फूंक दूं तो उस खेत में अच्छी फ़सल होगी। उन्होंने मुझसे यह भी बताया है कि "तुम रघुरामजी के पास जाओ। अपने इस अद्भुत का प्रदर्शन करके उनकी बंजरभूमि को दान में प्राप्त करो और उसे गरीबों में बांट दो। यदि तुम्हारे अद्भुत प्रदर्शन के बाद भी रघुरामजी अपनी जमीन न देंगे, मैं उन्हें शाप देकर उनकी जमीन को सदा के

लिए ऊसर बना दूंगी। उनका सारा धन राख हो जाएगा। उनकी सारी मवेशियाँ मर जाएँगी, फिर उन्हें कंगाल की सी जिंदगी बितानी पड़ेगी।" रतन ने कहा।

रघुराम ने पूछा—"बेटा, तुम कैसा अद्भुत प्रदर्शित करना चाहते हो?"

"यह बात मैं अभी तक स्पष्ट रूप से नहीं जानता। आज शाम को मुझे पूजा-अर्चना करनी है। तभी सारी बातें मालूम हो जायेंगी। आप बताइए कि क्या देवी के कहे अनुसार करने के लिए तैयार हैं?" रतन ने रघुराम से पूछा।

"अगर तुम अपने अद्भुत के द्वारा मेरे भीतर विश्वास पैदा करोगे तो मैं देवी के कहे अनुसार करने के लिए तैयार हूँ।" रघुराम ने जवाब दिया। शाम को रतन कुछ गरीब किसानों को साथ ले रघुराम के घर पहुँचा। उसने अपनी जेब में से कोनेदार गिलास निकाला, एक मेज पर रखकर बोला—"आप लोगों में से कोई एक जाकर बंजरभूमि से मुट्ठी भर मिट्टी लेते आइए।"

इस पर रघुराम का एक पुत्र जाकर मिट्टी ले आया। रतन ने मिट्टी को गिलास में डाला, गिलास पर जेब रूमाल ढक दिया। इसके बाद मेज के सामने बैठकर आँखें मूँदे ध्यान किया। थोड़ी देर बाद आँखें खोल गिलास पर से जेब रूमाल हटाया। आश्चर्य की बात थी कि गिलास भर में मिट्टी के बदले धान था।

"महालक्ष्मी माता की जय!" किसान चिल्ला उठे।

रघुराम के चेहरे पर आश्चर्य और भय दिखाई दिये। उसने कंपित स्वर में कहा–"दोस्तो, उस कमबख्त बंजर को में तुम्हें दे दूंगा। कागज़ लेते आओ, अभी मैं दस्तख़त किये देता हूँ।"

फिर क्या था, जिन किसानों के पास एक इंच जमीन न थी, उन्हें जमीन मिली। रतन ने चन्दा वसूल किये, सहकारी संघ से ऋण प्राप्त किया और सामूहिक कृषि के हेतु आवश्यक सारी तैयारियाँ कीं। सभी किसानों न मिलकर उस बंजर में सोने की फ़सल पैदा की। पैदावर सभी लोगों को समान रूप से प्राप्त हो गई। गाँव के सभी लोग प्रसन्न हुए, पर केवल रघुराम के चेहरे पर असंतोष दिखाई दिया।

रतन ने मिट्टी को धान के रूप में परिवर्तित करने के लिए कैसा जादू किया? उसने कोनेदार जिस गिलास का उपयोग किया था, वह साधारण गिलास न था। उस गिलास के मध्य भाग में आइने के टुकड़े बिठाये गये थे। उन टुकड़ों द्वारा गिलास को दो भागों में विभाजित किया गया था। आइने के टुकड़ों में प्रतिबिंबित होनेवाले हिस्से को बाहरी तरफ़ तथा लाल रंग की दिशावाले भाग भीतर की ओर जोड़े रहते हैं। आइने के इन टुकड़ों के द्वारा खाली गिलास के दोनों अर्द्ध भाग संपूर्ण गिलासों के रूप में दिखाई देते हैं। रतन ने उस गिलास के एक अर्द्ध भाग में पहले ही धान भरकर रखा था और उसे दीवार की ओर रखा, सबको दिखाई देनेवाले अर्द्ध भाग में मिट्टी भर दी। इसके बाद जब उसने जेब रूमाल हटाया, तब मिट्टीवाले भाग को सबको दिखाई देने लायक़ रखा। इस कारण अइनों की वजह से मिट्टी तथा धान भी गिलास में भरे रहने की भांति भ्रम पैदा करनेवाले सिद्ध हुए। कोनेदार गिलास होने के कारण उसने लोगों के भ्रम में और भी वृद्धि की।

सही निर्णय

वज्रगिरि के राजा वज्रपाल ने एक बार यह निर्णय किया कि अपने देश में किसी भी प्रकार के दुष्ट, अत्याचारी और दगाबाज न हो, इस निर्णय को अमल करने के वास्ते ऐसे लोगों को पकड़वाकर अपने राज्य से निकाल दिया। एक वर्ष तक बराबर यह कार्य जारी रहा। इस अवधि के भीतर प्रत्येक परिवार से एकाध व्यक्ति को देश से बाहर जाना पड़ा जिससे लोगों में हलचल मच गई।

इस पर कुछ बुद्धिमान लोगों ने गुप्त रूप से इकट्ठे हो राजा के इस निर्णय को बदलने की योजना बनाई। इस योजना के अनुसार सीमा-क्षेत्र के गाँवों से प्रति दिन शिकायतें आने लगीं। वे शिकायतें थीं कि चारों तरफ़ के जंगलों से शेर, बाघ जैसे खूँख़्वार जानवर गाँवों में घुसकर लोगों को खा रहे हैं।

राजा ने मंत्री को बुलाकर पूछा—"ऐसा तो कभी नहीं होता था, आज कल क्यों ऐसा हो रहा है?"

"महाराज, जंगल में रहनेवाले जंगली नेता अपने सीमा-क्षेत्र से खूँख़्वार जानवरों को भगा रहे हैं।" मंत्री ने उत्तर दिया।

"ऐसे जानवरों को या तो दण्ड देना चाहिए या उन्हें नियंत्रण में रखना चाहिए, पर दूसरे प्रदेशों में खदेड़ना कैसा बेमतलब का काम है?" राजा ने कहा।

"महाराज! हमने अपने देश के दुष्टों के साथ यही कार्रवाई तो की है?" मंत्री ने उत्तर दिया। राजा में ज्ञानोदय हुआ और उसने अपने निर्णय को बदल डाला।
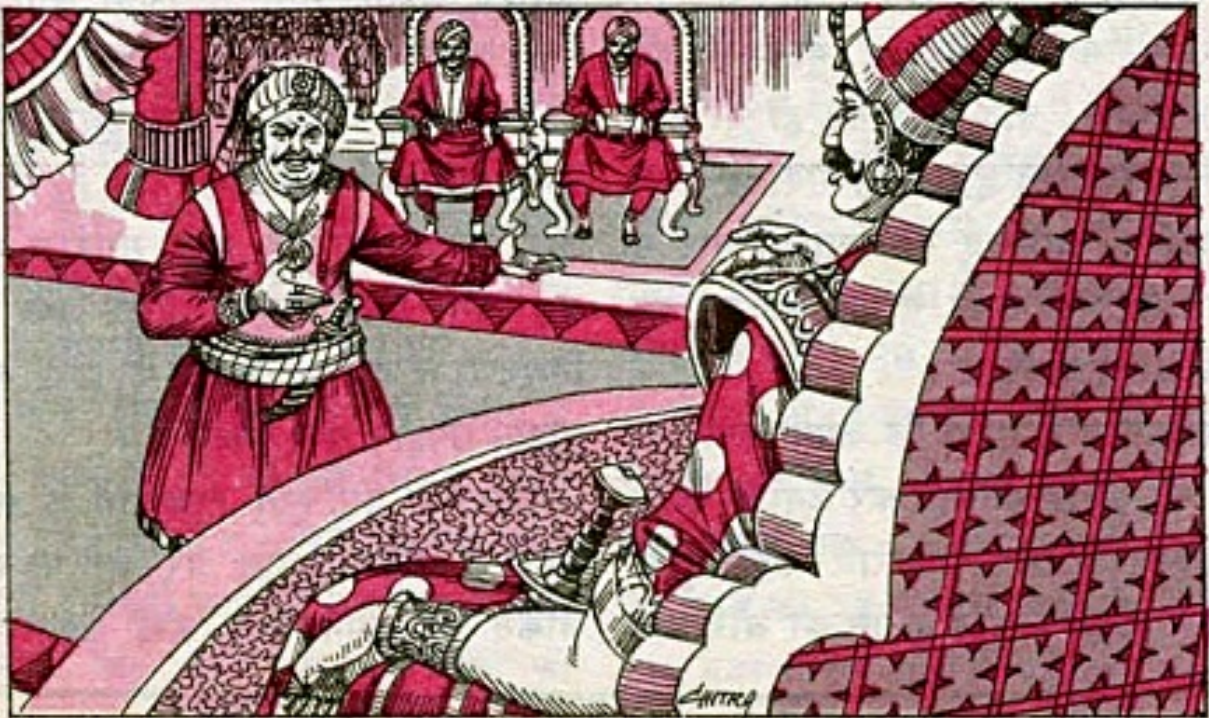
क़िस्मत की बात

राजाराम एक व्यापारी के यहाँ मुंशी था। उसकी शादी हाल में ही हुई थी। एक दिन सवेरे उसने आँख खोलते ही देखा कि उसकी पत्नी पिछवाड़े से फूल चुनकर घर में प्रवेश कर रही है।

"आज नींद से जागते ही मैंने तुम्हारा चेहरा देखा। न मालूम आज का दिन कैसे बीतेगा?" राजाराम ने कहा।

राजाराम की पत्नी ने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया–"नींद से जागते ही जो लोग मेरा चेहरा देखते हैं, उनका सदा भला ही होता है। इसीलिए मेरे पिताजी नींद से जागते ही मुझे अपने सामने बुलाकर तब आँखें खोला करते थे।"

राजाराम ने सोचा कि अपनी पत्नी की बात की सचाई की जांच कर लेनी चाहिए।

भोजन के बाद राजाराम अपनी दृष्टि जमीन पर ही टिकाये दूकान की ओर चल पड़ा। रास्ते में उसे कोई क़ीमती चीज़ न मिली।

दूकान पहुँचने पर राजाराम यह सोचकर आशावान था कि आज कोई बढ़िया सौदा हाथ लगे तो शायद मालिक खुश होकर उसे इनाम दे। मगर उस दिन रोज की बनिस्वत कम सौदा हुआ। मालिक अपनी पत्नी से किसी बात को लेकर झगड़ा करके चिड़चिड़ा दिखाई दिया।

राजाराम के मन में एक दूसरी आशा जगी, दीपावली निकट आ रही है, पिछले साल वह परिवार के साथ ससुराल गया था, इस साल उसका ससुर भले ही निमंत्रण न दे, पर किसी के द्वारा कोई बढ़िया उपहार भेज सकता है।

संध्या के होते-होते राजाराम के ससुर का एक नौकर दूकान पर आ पहुँचा। लेकिन वह अपने साथ कोई उपहार न

अशोक शर्मा

लाया था। उल्टे बोला–"आप के सास-ससुर तीर्थ-यात्रा पर जाना चाहते हैं। इसलिए आप से एक सौ रुपये माँग लाने के लिए मुझे भेजा है।"

"मेरे पास क्या है, खाक!" यों चिढ़कर राजाराम ने उस नौकर को खाली हाथ भेज दिया।

अंधेरा फैल गया। राजाराम का कोई भला न हुआ। वह अपनी क़िस्मत को कोसते घर की ओर चल पड़ा।

रास्ते में बत्ती की रोशनी में राजाराम को पहचानकर एक बूढ़ी पूछ बैठी–"तुम राजाराम हो न भाई!"

उस बूढ़ी को देखते ही राजाराम को मानों साँप छू गया। एक जमाने में उस बूढ़ी ने राजाराम को सहारा दिया था। बचपन में जब राजाराम के माँ-बाप मर गये, तब वह आवारे की तरह भटक रहा था, उस वक़्त इस बूढ़ी ने उसे अपने घर आश्रय दिया था। क्योंकि उसके थोड़े दिन पहले बूढ़ी का बेटा मर गया था, जो ठीक राजाराम जैसे लगता था।

"बेटा, तुम्हें देखने पर मुझे लगता है कि मैं अपने ही बेटे को देख रही हूँ। तुम मेरे घर रह जाओ।" बूढ़ी ने कहा था।

बूढ़ी दूध-दही व उपले बेचकर जो कुछ कमाती, उस रक़म से राजाराम को

खिलाती-पिलाती रही। वह दो साल तक बूढ़ी के यहाँ निश्चित रहा। मगर धीरे-धीरे बूढ़ी की ताक़त जवाब देती गई। दूध दुहना और उपले बनना भी उसके लिए कठिन हो गया।

एक दिन बूढ़ी ने राजाराम से कहा–"मेरी अंतिम घड़ियों में भगवान ने तुमको मेरे यहाँ भेजा है। मैं खाट पकड़ लूंगी तो तुम्हीं मुझे सहारा दोगे बेटा!"

ये बातें सुनने पर राजाराम की देह से पसीना छूट गया। उसने सोचा कि वह बूढ़ी उसके गले का पत्थर बनी है, एक दिन रात को वह चुपचाप बूढ़ी के घर से भाग गया। एक गाँव में पहुँचकर नौकरी

प्राप्त की और शादी करके गृहस्थ भी बन बैठा।

राजाराम बूढ़ी को देखते ही यह सोचकर डर गया कि उसने तो बूढ़ी को छोड़ दिया, पर वह उसे छोड़ना नहीं चाहती है। एक साल बाद फिर लौट आई है, शायद वह इस बुढ़ापे में उसी के घर रहना चाहती है। उसका बोझ कौन ढोवे?

"बेटा राजाराम! क्या तुमने मुझे नहीं पहचाना? मैं तुम्हारी पालतू नानी हूँ। तुम बिना मुझसे कहे घर से भाग गये थे न? मैं तुम्हारे वास्ते कैसे दुखी थी, तुम क्या जानो बेटा? मैं तुम्हारी ही खोज करते निकल पड़ी हूँ। अब मैं ज़्यादा दिन ज़िंदा नहीं रह सकती बेटा!" बूढ़ी ने आँखों में आँसू भरकर कहा।

राजाराम ने झटका देकर बूढ़ी का हाथ छुड़ा लिया। यह कहते वह वहाँ से चल पड़ा—"लगता है कि बुढ़ापे में तुम्हारी दृष्टि मंद पड़ गई है। वास्तव में मेरा नाम राजाराम नहीं, मैंने कभी तुम्हें देखा तक नहीं है।"

इसके बाद राजाराम ने घर लौटकर अपनी पत्नी से कहा—"आज मैंने तुम्हारा चेहरा देखा तो मेरा भला नहीं हुआ। बल्कि मेरी जान-पहचान की एक बूढ़ी मेरे पीछे पड़ी और उसने मेरे घर ठिकाना लगाने की कोशिश की। उसका पिंड़ छुड़ाकर घर लौटने में देरी हो गई है।"

"वाह, खूब है! जब क़िस्मत साथ न देती तब मुँह का कौर भी मिट्टी में मिल जाता है।" पत्नी ने समझाया।

यह बात सौ फी सदी सच थी। क्यों कि बूढ़ी को अपने घर के पिछवाड़े में दबा हुआ खजाना हाथ लगा था। उसने राजाराम को पाला-पोसा था, इस ममता को लेकर वह राजाराम को वह ख़जाना सौंपने के ख्याल से उसकी खोज में निकल पड़ी थी, मगर राजाराम की क़िस्मत खोटी थी, इसलिए उसने बड़ी मुश्किल से बूढ़ी का पिंड़ छुड़ा लिया।
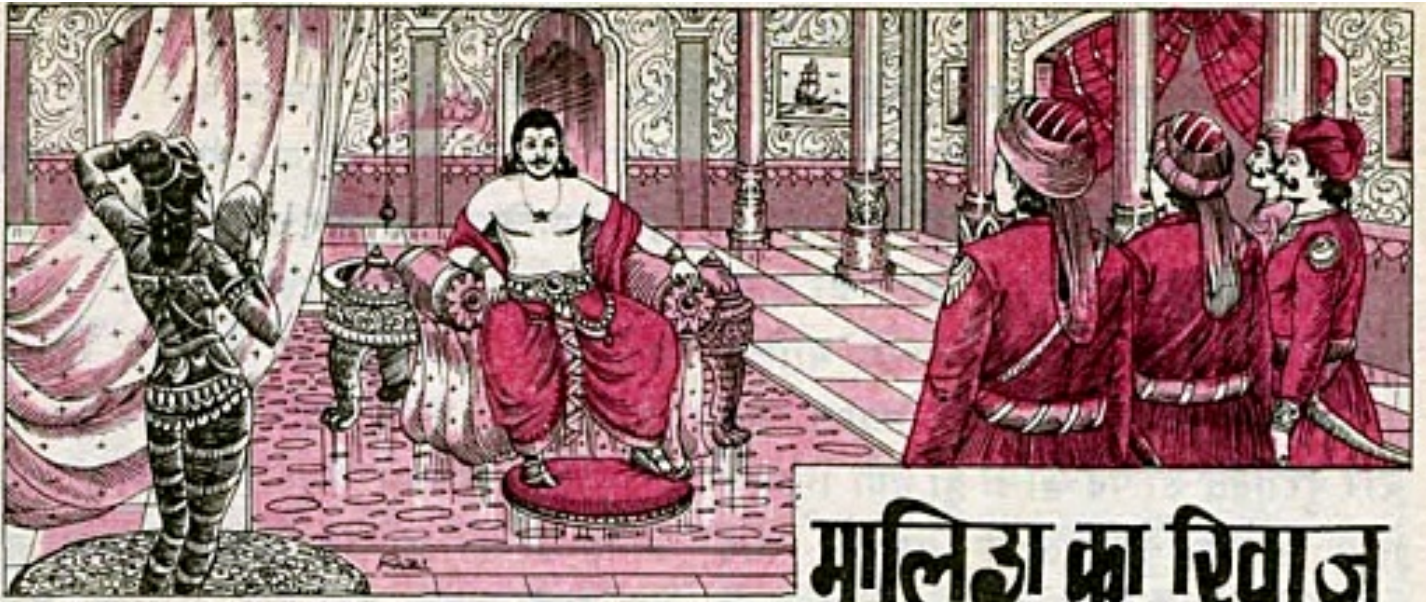
मालिश का रिवाज़

प्रचण्ड देश के राजा प्रभंजन का सेनापति एक दिन अचानक मर गया। इस पद के योग्य व्यक्ति चार थे। इस कारण राजा की समझ में न आया कि उनमें से किसको नियुक्त किया जाय! .

राजा का नाई प्रति दिन सवेरे राजा के शरीर में तेल लगाकर मालिश करता और उसे नहलाता था। उस वक़्त राजा नाई को अपनी समस्याएँ सुनाया करता था।

राजा ने एक दिन अपनी नई समस्या नाई के सामने रखी। नाई ने सलाह दी– "महाराज, सेनापति अगर केवल शक्ति रखता है, तो पर्याप्त नहीं है। उसमें अपार राजभक्ति भी होनी चाहिए।"

"लेकिन यह बात मैं कैसे जानूं कि सेनापति राज-भक्त है?" राजा ने पूछा।

नाई ने राजा को एक उपाय बताया। इस पर राजा ने सेनापति के बनने योग्य चार व्यक्तियों को बुला भेजा और कहा–"मैं तुम लोगों की परीक्षा लेना चाहता था। इसी विचार से तुम्हें बुलाया, पर मेरे शरीर की मालिश करके नहलानेवाले नाई को आज बिच्छू ने डंक मारा है, इस कारण वह नहीं आया। इसलिए कल देखा जाएगा।"

ये बातें सुनकर चारों उम्मेदवार चल पड़े। पर एक ने लौटकर कहा–"महाराज, नाई के न आने मात्र से आप को कष्ट उठाने की ज़रूरत क्या है? आप की सेवा करना ही तो हमारा धर्म है।" ये शब्द कहते उस व्यक्ति ने राजा के बदन की मालिश की। फिर क्या था, उसे सेनापति का पद प्राप्त हुआ। उसका नाम शूरवर्मा है।

इसके थोड़े दिन बाद मंत्री का पद रिक्त हुआ। मौक़ा देख शूरवर्मा ने अपने

एक मित्र महामति को मंत्री का पद प्राप्त करने का उपाय बताया। महामति ने दूसरे दिन सवेरे पहुंचकर राजा की मालिश की और मंत्री का पद पाया।

उस दिन से जो भी पद खाली हो जाते, तब राजा अपनी देह की अच्छी मालिश करनेवालों को वे पद देता गया। एक बार पुरोहित का पद खाली हो गया। उसके लिए सिवाय पुरोहित के पुत्र के कोई दूसरा व्यक्ति न था। ऐसे संदर्भों में राजा की मालिश न करनेवालों को भी पद देना पड़ा। इस बात का राजा को बड़ा दुख भी हुआ। इस कारण राजा ने यह नियम बनाया कि उसके यहाँ काम करनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को अपनी नौकरी के प्रथम दिन राजा की मालिश करनी ही होगी।

एक बार राजा को चमड़े की बीमारी हो गई। इस पर राजवैद्यों ने राजा को सलाह दी-"महाराज! आप ने हर किसी से मालिश कराई, उनमें से किसी को यह बीमारी थी, उसके द्वारा मालिश कराने के कारण आप को यह बीमारी हो गई है। हम इस बीमारी का इलाज कर सकेते हैं। मगर आइंदा आप को जो भी मिला उसके द्वारा मालिश नहीं करानी चाहिए।"

वैद्यों ने राजा का इलाज किया। फिर क्या था, 'मालिश का कानून' रद्द हो गया। राजा ने यह खबर नाई को सुनाई।

नाई ने हंसकर कहा-"महाराज, राज भक्ति की परीक्षा लेने के लिए मालिश ही एक मात्र उपाय नहीं है। अकारण आप किसी पर नाराज़ भी हो जायेंगे तो उसे सहन करके आप से क्षमा याचना करनेवाला व्यक्ति भी राज भक्त होता है।"

इसके बाद राजा इस नये सूत्र के आधार पर अपने दरबार के रिक्त स्थानों की पूर्ति करने लगा। इस प्रकार मालिश करने का रिवाज़ तो हट गया, मगर वह एक कहावत के रूप में लोकप्रिय हो गया। कोई अयोग्य व्यक्ति नौकरी प्राप्त करता तो लोग आज भी कहा करते हैं कि 'उसने किसी की मालिश की होगी।'

गधे का बोझ

एक गाँव में राघव नामक एक धोबी था। उसके कई बच्चे थे। परिवार का बोझ न उठा पा सकने की हालत में वह एक दिन घर से भाग निकला। तब राघव का बड़ा बेटा जो तेरह साल का था, उस परिवार का बोझ उठाने लगा।

पाँच साल बाद धोबी अपने घर लौट आया। वह जो बोझ उठा न पाया, उसे अपने बेटे के द्वारा उठाते देख वह बड़ा खुश हुआ। बेटे ने अपने बाप को घर लौटे देखा तो वह यह सोचकर खुश हुआ कि उस बोझ को उठाने में वह भी थोड़ा-बहुत हाथ बटायेगा।

मगर राघव ने किसी तरह की मदद तो नहीं की, उल्टे खा-पीकर आराम करने लगा। थोड़े दिन बाद बेटे ने अपने बाप को सबक़ सिखाना चाहा। एक दिन राघव के देखते उसने गधे पर भारी बोझ लादा और उछलकर वह भी उस पर बैठ गया। गधा लुढ़क पड़ा।

इसे देख राघव चिल्ला उठा–"अरे दुष्ट, तुमने गधे को मार डाला। उस पर भारी बोझ लादा. उल्टे तुम भी उस पर सवार हो जाते हो?"

"मैं भी यही बात तुम से पूछना चाहता था। मैं जो बोझ उठा रहा हूँ, उसी से दबा जा रहा हूँ। तिस पर तुम मुझ पर आ बैठे हो।" बेटे ने जवाब दिया। ये बातें सुन राघव की आँखें खुल गईं।
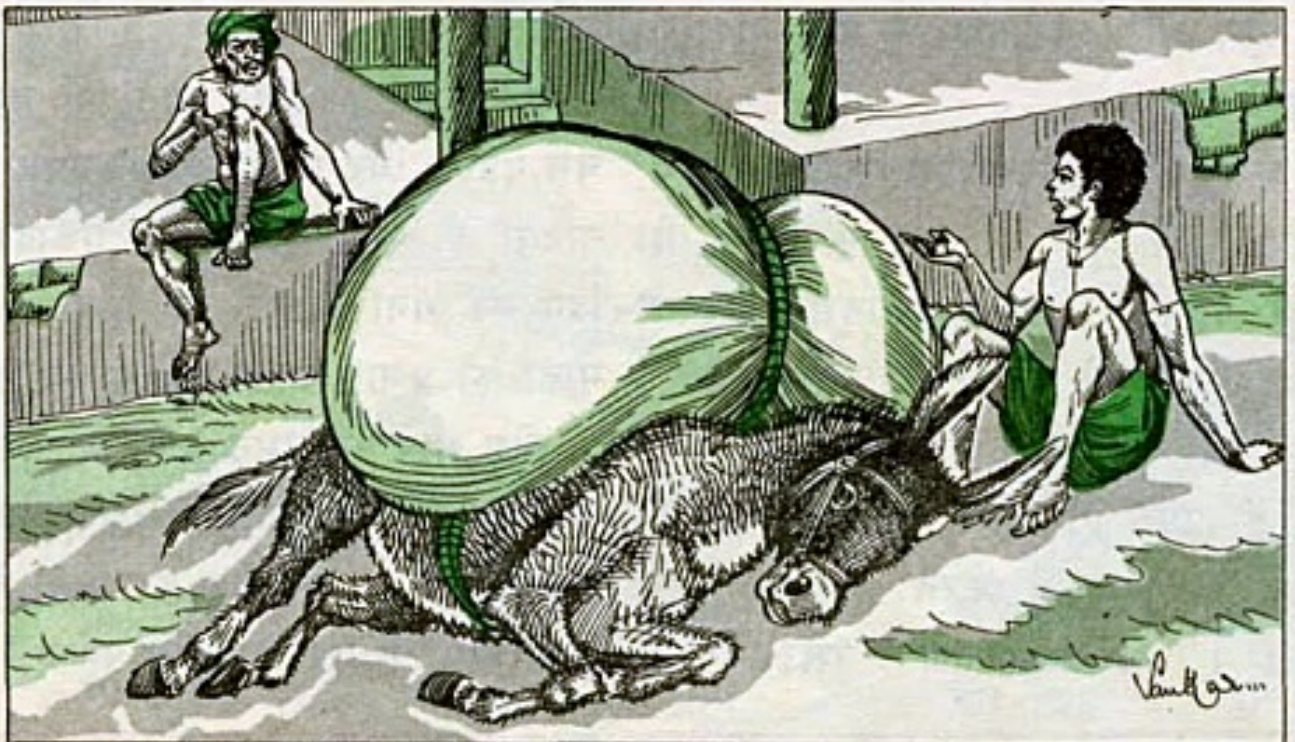
स्वर्ग का निकट मार्ग

प्राचीन काल की बात है। रामापुर में कृष्णशर्मा नामक एक अनाथ व्यक्ति था। वह गांववालों के कामों में मदद देता, जो कुछ मिलता, खाकर रात के वक़्त भजन मण्डप में सो जाता। उस मण्डप में अकसर हरिकथाएँ होतीं। उन कहानियों को सुनते उसके मन में भी स्वर्ग लोक, इन्द्र का वैभवपूर्ण जीवन, अप्सराओं के नृत्य और स्वर्ग-सुखों के प्रति आकर्षण बढ़ गया।

एक दिन हरिकथावाचक मण्डप में आराम कर रहा था, तब कृष्णशर्मा ने वहाँ पहुँचकर पूछा–"महानुभाव, स्वर्ग सुख प्राप्त करने का सरल उपाय क्या है?"

"बेटा, स्वर्ग सुख बड़े-बड़े पुण्यात्माओं को ही प्राप्त होते हैं। तुम इस लोक के सुखों का अनुभव करते हुए तृप्त हो जाओ।" हरिकथावाचक ने उत्तर दिया।

कृष्णशर्मा उन बातों से तृप्त नहीं हुआ, फिर बोला–"इन लौकिक सुखों के प्रति मेरे मन में ज्यादा मोह नहीं है। जहाँ तक हो सके, शीघ्र स्वर्ग पहुँचने की मेरी कामना है।"

हरिकथावाचक खीझकर बोला–"तब तो तुम वैकुण्ठ एकादशी के दिन गंगा में डूब जाओ। तुम सीधे स्वर्ग में पहुँच जाओगे!"

कृष्णशर्मा उस दिन रात को वहाँ से चल पड़ा। वह गाँव, पहाड़, जंगल और नदियों को पार करते वैकुण्ठ एकादशी के दिन तक गंगा के तट पर पहुँचा। गंगा माता को प्रणाम करके नदी में कूद पड़ा।

होश आने पर उसने अपने को नरक में पाया। सामने यमराज और चित्रगुप्त दिखाई दिये। उन्हें देख कृष्णशर्मा हताश हो बोला–"मैं यहाँ तक कैसे पहुँचा? क्या

महा पर्व के दिन आत्मत्याग करनेवाला व्यक्ति नरक में जाता है?"

"तुम्हारा कहना तो सही है, लेकिन अभी तक तुम्हारी आयु शेष है। मानव का जन्मधारण करने के कारण तुम अपने कर्तव्य पूरा करोगे, तभी तुम्हें स्वर्ग की प्राप्ति होगी।" चित्रगुप्त ने समझाया।

"अब तुम जा सकते हो!" ये शब्द कहकर यमराज ने हाथ हिलाया, दूसरे ही क्षण कृष्णशर्मा चक्कर काटते गंगा के तट पर आ गिरा।

कृष्णशर्मा ने उठकर धूल झाड़ ली। समीप के एक शहर में गया और एक व्यापारी के घर काम पर लग गया। वह शीघ्र ही उस परिवार के एक सदस्य के रूप में स्थिर हो गया। व्यापारी ने अपनी पुत्री के साथ कृष्णशर्मा का विवाह किया और अपना सारा व्यापार उसे सौंप दिया।

कालांतर में कृष्णशर्मा के दो बच्चे हुए। इसके बाद उसके मन में फिर से स्वर्ग के सुख भोगने की लालसा पैदा हुई। उसे लगा कि मानव जन्म धारण करने के कारण उसने विवाह करके गृहस्थी के सुख भोगे, बच्चों का जन्म देकर अपने कर्तव्य भी निभाये, इसलिए अब वह स्वर्ग लोक में जा सकता है। यों सोचकर किसी को बताये बिना वह फिर एक दिन गंगा में कूद पड़ा।

इस बार भी वह नरक में पहुँचा। इस पर यमराज ने उसे देख खीझकर पूछा—

"तुम अपने कर्मों के पूरा होने के पूर्व ही फिर से क्यों यहाँ आये हो?"

"महाराज! मैंने अपने सारे कर्तव्य पूरा किये हैं। अब कुछ भी करना शेष नहीं है।" कृष्णशर्मा ने सकुचाते हुए उत्तर दिया।

"अरे मूर्ख! तुम्हारी आयु अभी समाप्त नहीं हुई है। तुम वृद्ध होकर जब तक सहज मृत्यु प्राप्त न करोगे तब तक यहाँ पर मत आओ, जाओ।" यों डांटकर यमराज ने उसे पृथ्वीलोक में भेज दिया।

दिन बीतते गये। कृष्णशर्मा गृहस्थी के बंधनों में फँस गया। उसके बच्चे बड़े हुए, विवाह करके बच्चों के बाप भी बने। इस पर कृष्णशर्मा के मन में गृहस्थी के प्रति अधिक मोह पैदा हुआ।

एक दिन कृष्णशर्मा अपने पोते के साथ खेल रहा था, तभी यमराज के दूत आकर उसके सामने खड़े हो गये।

उन्हें देख आश्चर्य में आकर उसने पूछा–"इतनी जल्दी तुम लोग क्यों आये?"

"तुम्हारी आयु अब पूर्ण रूप से समाप्त हो चुकी है। तुम्हें शीघ्र लिवा लाने का हमें आदेश हुआ है।" यों कहते यमराज के दूत कृष्णशर्मा को अपने साथ ले गये।

यमराज कृष्णशर्मा को देख हँस पड़े और बोले–"तुम्हारी कामना पूरी हो गई है। अब तुम सजा भोगो।"

"भगवान, यह तो सरासर अन्याय है! मैंने आप के कहे अनुसार ही किया है। मुझे आप सजा क्यों दे रहे हैं?" कृष्णशर्मा ने पूछा।

"तुमने मन लगाकर अपने कर्तव्यों का पालन नहीं किया। स्वर्ग सुख पाने का निकट मार्ग ढूंढा। इसलिए तुम्हें स्वर्ग का सुख थोड़ा ही प्राप्त हुआ है। यह भी इसलिए कि तुमने अपने परिवारवालों के प्रति अनुराग दिखाकर पुण्य कमाया था। इस कारण तुम पहले नरक की सजा भोगकर इसके बाद स्वर्ग का वह थोड़ा-सा सुख भोग सकोगे।" यमराज ने समझाया।

मूर्ख लोग

रंगापुर में वासुदेव नामक एक धनी था। उसने समुद्री व्यापार करके अपार धन कमाया और अपने गाँव में जमीन-जायदाद और बाग-बगीचे भी ख़रीदे।

वासुदेव के सिद्धेश्वर नामक एक निकट रिश्तेदार था जो वासुदेव की उन्नति देख जलता था। उसने भी वासुदेव की भांति सभी क्षेत्रों में उन्नति करने की होड़ लगाकर अपना सब कुछ खो दिया। इस कारण वासुदेव के प्रति उसकी ईर्ष्या और बढ़ गई।

वासुदेव प्रति दिन शाम को चौपाल में पहुँच जाता था। एक दिन उसने लोगों को समझाया—"हमारे जमीन्दार जनता से कर वसूल करते हैं, पर उनकी भलाई के बारे में बिलकुल नहीं सोचते। हर साल नदी में बाढ़ आती है जिससे हमारी फ़सलें नष्ट हो जाती हैं। यदि बाढ़ को रोकने के लिए पत्थरों की दीवार बना दी जाय तो हम अपनी फ़सल को बचा सकते हैं। इसका जो ख़र्च होगा, आधा मैं दूंगा, बाक़ी ख़र्च आप सब लोग उठाइये।"

इस पर लोगों ने अपनी सम्मति दी। पर सिद्धेश्वर ने प्रत्येक घर जाकर समझाया—"आप सब लोग कैसे मूर्ख हैं! वासुदेव आप लोगों को धोखा दे रहा है। अगर नदी में बाढ़ आई तो नदी के निचले भाग में स्थित उसी के खेत बरबाद हो जायेंगे। हमारी फ़सल की कोई हानि न होगी। वासुदेव अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए दीवार बनाना चाहता है और उसका आधा ख़र्च गाँववालों से वसूलना चाहता है।" फिर क्या था, सब लोगों ने वासुदेव के साथ असहयोग किया।

थोड़े दिन बाद चौपाल में वासुदेव ने लोगों को समझाया—"हमारे गाँव के बाहर जो नहर है, उस पर यदि पुल

श्याम सुंदर गर्ग

बनवाया जाय तो गाँव में आने-जानेवालों के लिए बड़ी सहूलियत होगी। पुल का जो खर्च होगा, तीन-चौथाई खर्च मैं वहन करूँगा, बाक़ी खर्च आप लोग उठाइए।"

गाँव के लोगों को वासुदेव की सलाह बड़ी अच्छी लगी। सबने मिलकर बाक़ी खर्च उठाने की सम्मति दे दी। मगर इस बार भी सिद्धेश्वर ने कहा—"पुल बनाने पर वासुदेव के माल लादकर जाने-आनेवाली गाड़ियाँ आसानी से गाँव में आ-जा सकती हैं। बाक़ी लोगों के लिए उस पुल से फ़ायदा ही क्या रहा? नाव से तो हमारा काम चल जाता है न?"

इस बार भी लोगों ने वासुदेव के कार्य में मदद न दी। इसके थोड़े दिन बाद वासुदेव ने गाँववालों से कहा—"गाँव की पूर्वी दिशा में मेरा एक छोटा-सा जंगल है। अगर कोई उसे जलाकर कोयला बनाना चाहे तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

फिर क्या था, गाँव के कई लोगों ने जाकर जंगल में आग लगा दी। जंगल के जलने के साथ पूरब की हवा के लगने से गाँव के कुछ घर भी जल गये। मौक़ा देख सिद्धेश्वर ने गाँववालों को भड़काया। उन लोगों ने वासुदेव के घर पहुँचकर पूछा—"आप के सुझाव के कारण गाँव को बड़ा नुक़सान उठाना पड़ा है। इसलिए आप उसका मुआवजा उठाइए।"

वासुदेव ने सबको डांटा—"जब मैंने आप लोगों की भलाई की बातें बताईं, तब वे बातें आप के दिमाग में न घुसीं, किसी दुष्ट की बातें सुनकर आप लोगों ने मेरे प्रस्तावों को ठुकरा दिया। लेकिन मैंने जब आप को बेकार की सलाह दी तब आप लोगों ने किसी की सलाह न माँगी, उल्टे जल्दबाजी में यह काम कर दिया। इसलिए इसका फल भोगिये।"

ये बातें सुन गाँववाले शर्म के मारे सर झुकाये वहाँ से चले गये। मगर बिना एक पैसा खर्च किये वासुदेव का जंगल साफ़-सुधरा हो गया। इसके बाद उसने वहाँ पर नारियल का बगीचा लगाया।

उल्टी चाल

एक गाँव में शरभ नामक एक कंजूस था। उसका लड़का गणेश शहर में पढ़ता था।

एक बार उसने अपनी माँ की जन्मगांठ पर दो सौ रुपये की क़ीमत की रेशमी साड़ी ख़रीदी, उसे अपने पिता के पास भेजते हुए लिख भेजा कि उसका दाम सौ रुपया है। उसने सोचा कि असली दाम बताने पर उस पर नाराज़ होगा।

दो दिन बाद गणेश को अपने पिता का पत्र मिला। उसमें लिखा था—"तुमने जो साड़ी भेजी थी, उसे डेढ़ सौ रुपये में बेचकर पचास रुपये का लाभ प्राप्त किया। दस और सड़ियों की माँग है, इसलिए तुम जल्दी ख़रीदकर दस साड़ियाँ भेज दो।"

उस चिट्ठी को देखने पर गणेश का दिल बैठ गया।

मानवता

सौ साल पहले की बात है। उन दिनों में जनपदों में पंचायतें दूध का दूध और पानी का पानी न्याय के लिए बहुत ही प्रसिद्ध थीं। वल्लभपुर नामक गाँव में रामानुज एक छोटा-सा किसान था। एक दिन वह अपने पिता के साथ बगीचे में काम कर रहा था। उस वक़्त एक बकरी आकर पौधों को चरने लगी। इस पर गुस्से में आकर रामानुज के पिता ने बकरी पर पत्थर फेंका, चोट सिर पर जा लगी, जिससे बकरी उसी वक़्त मर गई।

दूसरे ही क्षण बाड़ी के उस पार से एक पत्थर आकर रामानुज के पिता के सिर पर लगा। पत्थर की चोट खाकर बूढ़े ने दम तोड़ दिया। रामानुज बगीचे से बाहर निकला। देखता क्या है, एक गड़रिया भेड़ों को हांकते चला जा रहा है। रामानुज ने उसे पकड़ ले जाकर पंचों के हाथ सौंप दिया और फ़रियाद की कि गड़रिये ने उसके पिता को मार डाला है।

उसी वक़्त पंचायत बैठ गई। पंचों ने गड़रिये से पूछा–"कहो भाई, तुम रामानुज की फ़रियाद का क्या उत्तर देते हो?"

गड़रिये ने यों जवाब दिया–"मेरा नाम गोपाल है। मेरा गाँव यहाँ से उत्तर में छे कोस की दूरी पर है। बरसात न होने की वजह से इस साल भेड़-बकरियों को चारा न मिला। इसलिए मैं अपनी भेड़ों को चराते इस ओर आ निकला। मेरी रेवड़ में से एक बकरी जाकर इस रामानुज के बगीचे में चरने लगी। इस पर इसके पिता ने मेरी बकरी को पत्थर से दे मारा। मैंने भी गुस्से में पागल हो बूढ़े पर पत्थर फेंका। चोट खाकर बूढ़ा मर गया। वास्तव में जो कुछ हुआ है, मैंने सच-सच बता दिया है, इसलिए आप जो

शीला अग्रवाल

भी फ़ैसला करेंगे, मैं उस दण्ड को पाने के लिए तैयार हूँ।"

गड़रिये की सचाई पर सभी लोग प्रसन्न हो गये। लेकिन अपने नियम के अनुसार पंचों ने उसे मृत्यु-दण्ड सुनाया। लेकिन उसी नियम के अनुसार रामानुज गोपाल से हर्जाना लेकर उसे क्षमा कर सकता था। पर रामानुज ने उसे क्षमा करने से इनकार कर दिया। इस कारण गोपाल को मृत्यु दण्ड क़ायम हो गया।

गोपाल ने पंचों से कहा–"मुझे अपने किये का फल भोगना ही था। मेरी क़िस्मत में दण्ड बदा हो तो कोई क्या कर सकते हैं? लेकिन आप लोगों से मेरा एक निवेदन है। वह यह कि मेरे पांच साल का एक छोटा भाई है। मेरे पिता ने मरते वक़्त अपनी जायदाद हम दोनों में बांटकर दिया और छोटे भाई के पालन-पोषण की जिम्मेदारी के साथ उसके हिस्से का धन भी मुझे सौंप गये हैं। मैंने उस धन को अपने हिस्से के धन के साथ एक गुप्त प्रदेश में जमीन में छिपा रखा है। यह बात मेरे सिवा कोई नहीं जानता। यहाँ पर मैं मर जाऊँगा तो वह सारा धन मिट्टी में मिल जाएगा। मेरा छोटा भाई अनाथ हो जाएगा। इसलिए आप लोग मुझ पर कृपा करके मुझे तीन दिन की मोहलत दे तो उस धन को निकालकर अपने भाई के साथ उसे भी एक विश्वास पात्र व्यक्ति के हाथ सौंपकर लौट आऊँगा।"

पंचों ने कहा–"अगर तुम ऐसा करना चाहते हो तो तुम्हारी जगह किसी को जामीन रहना होगा!"

वहाँ पर गोपाल के जान-पहचान का कोई व्यक्ति न था। उसने वहाँ पर बैठे हुए सभी किसानों के चेहरों पर दृष्टि डाली, तब ठाठ से बैठे हुए जगमोहन नामक एक किसान की ओर उंगली दिखाकर कहा–"ये मेरे जामिन रहेंगे।"

जगमोहन ने जामिन देने को मान लिया और तीसरे दिन की संध्या तक रामानुज को मोहलत दी। फिर क्या था, गोपाल भेड़ों की रेवड़ को हांकते वहाँ से चला गया।

तीसरे दिन दुपहर के बीत जाने पर भी गोपाल का कहीं पता न था।

गाँववाले यों सोचकर दुखी होने लगे–"बेचारे, भोले जगमोहन ने अपनी जान पर आफ़त मोल ली है।" क्योंकि गोपाल न लौटा तो उसे ही मृत्यु दण्ड दिया जाएगा।

संध्या को इसी का निर्णय करने पंचायत फिर बैठ गई। सूर्यास्त के होने में अभी एक घड़ी शेष थी, तभी गोपाल हांपते-हांपते दौड़ आ पहुँचा।

उसे देख सब लोग एक साथ बोल उठे–"शबाश! गोपाल! तुम धन्य हो!"

"मुझे तो अपने वचन का पालन करना था, इसलिए लौट आया।" गोपाल ने जवाब दिया।

"मानवता को साबित करने के लिए ही मैंने जामिन दिया था।" जगमोहन ने कहा।

"गोपाल ने अपने वचन का पालन किया, जगमोहन ने अपनी मानवता का निरूपण किया, इसलिए मैं भी अपने को दयावान साबित करने के लिए गोपाल को क्षमा कर देता हूं।" रामानुज ने कहा।

पंचों ने तीनों की प्रशंसा की। उस दिन रामानुज गोपाल को अपने अतिथि के रूप में अपने घर ले गया और दूसरे दिन सादर उसे भेज दिया।

पर उपदेश कुशल बहुतेरे!

एक गाँव में शिवराम प्रसाद नामक एक युवक था। उसके माता-पिता कभी के मर चुके थे। जो कुछ जमीन-जायदाद थी, उसी में अपनी जीविका चला लेता था। गाँववालों की नज़र में वह एक बुद्धिमान था। इसलिए कई लोग उसके साथ अपनी कन्या ब्याहने आगे आये। उनमें पड़ोसी गाँव का पटवारी एक था। पटवारी की पुत्री पार्वती अत्यंत रूपवती थी, इस कारण शिवराम ने उसके साथ विवाह किया।

विवाह के तीन-चार महीने बाद से शिवराम प्रसाद अपनी पत्नी पर बात-बात पर नाराज़ होने लगा। कारण पार्वती फ़िज़ूल खर्च करती थी। शादी के बाद के तीन-चार महीने का खर्च देख वह खीझ उठा। यदि यही क्रम जारी रहा तो उसका दीवाला निकल जाएगा।

पार्वती भी अपने पति के व्यवहार को सहन न कर पाई। वह एक बड़े परिवार से आई थी। इस कारण रसोई, मिठाइयाँ आदि ज्यादा बनाती थी। मगर अपने पति का व्यवहार देख उसने अपनी आदत पर नियंत्रण रखने का प्रयत्न किया, लेकिन घर-गृहस्थी के लिए जिन चीज़ों की ज़रूरत होती हैं, उन्हें अंधा-धुंध ख़रीदती गई। शिवराम की अनुमति लिये बिना दो साड़ियाँ ख़रीद लीं, इस पर शिवराम के क्रोध का पारा चढ़ गया। दोनों के बीच वाद-विवाद और झगड़े बढ़ते गये।

आख़िर तंग आकर एक दिन शिवराम अपनी पत्नी पार्वती को साथ ले अपने ससुराल पहुँचा। उसने अपने सास-ससुर से कहा–"ऐसी फ़िज़ूल खर्ची औरत के साथ गृहस्थी निभाना मुझसे नहीं बनता। अब आप ही फ़ैसला कीजिए कि इसे समझा-

जगदीश चन्द्र शर्मा

बुझाकर सही रास्ते पर ले आयेंगे या जिंदगी भर इसको अपने ही घर रखेंगे !"

"पार्वती को समझाने की जिम्मेवारी हमारी है, पर तुम थोड़ा शांत हो जाओ।" यों पार्वती के माता-पिता ने शिवराम से मिन्नत की। क्योंकि उन का डर था कि कहीं उनकी पुत्री की गृहस्थी बिगड़ न जाय।

उन दिनों में गावों में कोई भी पारिवारिक कलह होते, तो गाँव के बुजुर्ग पंचायत बिठाकर उचित फ़ैसला कर लिया करते थे।

पार्वती की माँ सीतालक्ष्मी ने अड़ोस-पड़ोस की महिलाओं के पास जाकर सारी बातें समझाईं और उनसे निवेदन किया कि वे पार्वती की गृहस्थी के बिगड़ने से बचाने की जिम्मेवारी अपने ऊपर ले। महिलाओं के समय बिताने के लिए इससे बढ़कर अच्छा मौक़ा कब मिल सकता था। वे अपने काम जहाँ के तहाँ छोड़कर सीतालक्ष्मी के घर पहुँचीं।

इसी प्रकार पटवारी भी अड़ोस-पड़ोस के चार-पाँच बुज़ुर्गों को बुला ले आया।

आंगन में पुरुष एक ओर और औरतें दूसरी तरफ़ बैठ गईं। पार्वती क्रोध के मारे जल-भुनकर एक कोने में जा बैठी। शिवराम प्रसाद ने पार्वती के व्यवहार के प्रति अपना आक्षेप सबके सामने रखा।

औरतों में से एक बड़ी सुमंगली ने पार्वती को समझाया—"बेटी, अपने पति के
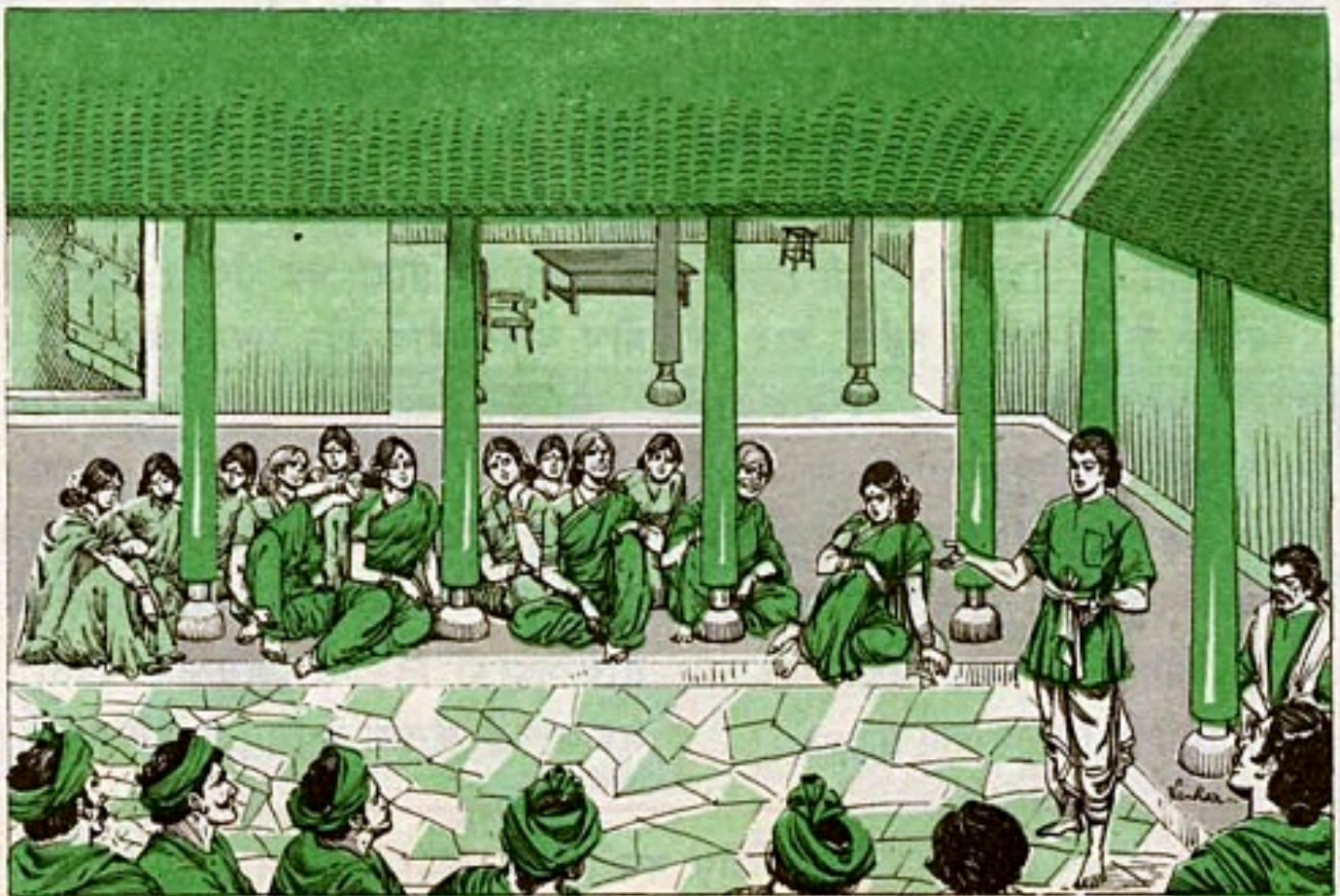
प्रति ऐसी लापरवाही दिखाना उचित नहीं है। आखिर तुम्हारे पति ने कोई बुरी बात तो नहीं कही। किफ़ायती के साथ गृहस्थी चलाने की सलाह दी है। तुम थोड़ी किफ़ायत बरती तो कोई शिकायत ही न थी। इतना बखेड़ा खड़ा करने की क्या जरूरत थी? आखिर पति अपनी पत्नी को गालियाँ दे या पीटे, उसका देवता तो पति ही होता है।"

एक दूसरी औरत ने आगे बढ़कर कहा—"दांपत्य जीवन सौ साल का वरदान है। तुम नाहक़ जिद करके अपनी गृहस्थी को बरबाद न करो। तुम्हें दुनियादारी का कोई अनुभव नहीं है। हम लोग कितने सालों से गृहस्थी चला रही हैं। हमने तो कभी ऐसे झगड़े नहीं किये। इसलिए तुम अपने पति का कहना मान जाओ। अपनी जिद्दी छोड़ दो, इसी में तुम्हारी भलाई है।"

तीसरी औरत बोल उठी—"औरत को भर पेट खाना और तन ढकने को कपड़े मिल जाते हैं तो इसी में संतुष्ट रहना चाहिए। अपने पति के सामने दबकर रहना चाहिए।"

पार्वती ने देखा कि वहाँ पर बैठे हुए पुरुषों में यहाँ तक कि उसके पिता भी प्रतिवाद नहीं कर रहे हैं, केवल औरतें ही उपदेश दे रही हैं, मानो उसके द्वारा कोई बड़ा अपराध हो गया हो! इस पर पार्वती के तन-बदन में आग लग गई।
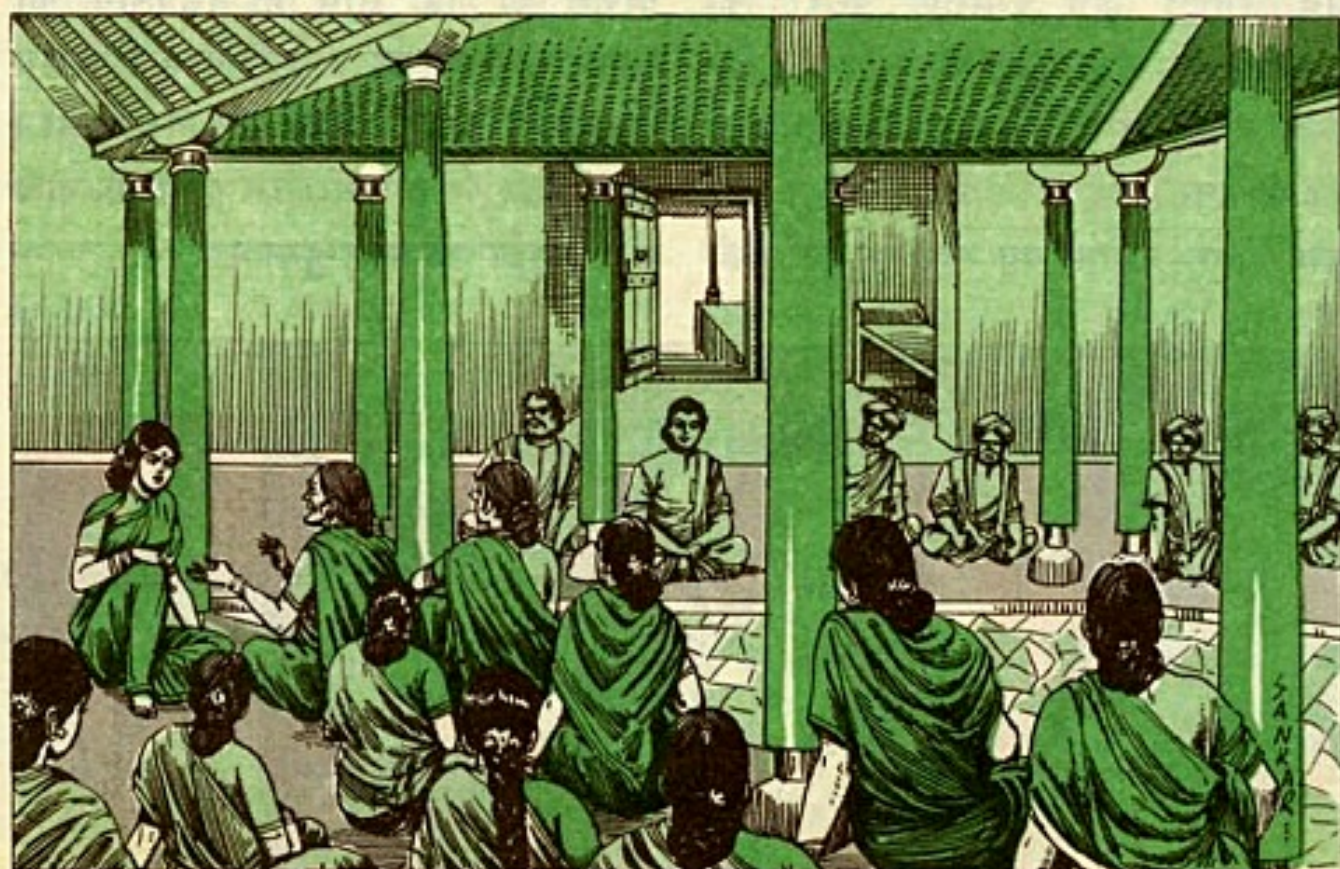
चौथी औरत कुछ कहने को हुई, तभी पार्वती ने कहा–"अब आप लोग अपने उपदेश रहने दीजिए! मुझे उपदेश देने की योग्यता आप में से किसी को भी नहीं है। मैं आप लोगों को बचपन से ही जानती हूँ। आप लोग अपने पतियों की बातों का कहाँ तक पालन करती हैं, यह भी मैं अच्छी तरह से जानती हूँ। आप में से एक अपने पति की आँख बचाकर चावल-दाल बेचकर गुप्त रूप से गहने बनवा लेती है और यह कहकर अपने पति को धोखा देती है कि मायके से गहने आये हैं। दूसरी है, अपने पति के खेत में जाते ही घर-घर जाकर झगड़े-फ़साद खड़ा करनेवाली है। मायके में अपने घर की सारी चीज़ें भेजनेवाली तीसरी है, इस तरह जो-कुछ करती हैं, मैं सब जानती हूँ। इसलिए दूसरों को उपदेश देते समय यह आत्म-विमर्श कर लेना अच्छा होगा कि पर उपदेश करने की योग्यता हममें है कि नहीं, लेकिन आप लोगों का नसीब यह है कि ये बातें जानते हुए आप के पति शांतिपूर्वक सहन कर रहे हैं। इसलिए उनकी तारीफ़ करनी होगी!"

तब तक चुपचाप बैठे ये सारी बातें मुँह बाये सुननेवाले शिवराम का सर चकरा गया। उसने यह सोचकर पुरुषों की ओर देखा कि इस दुनियाँ में ऐसी महिलाएँ भी क्या होती हैं। उसे लगा कि सभी लोग पार्वती की बातों की सचाई को स्वीकार कर रहे हैं। उसे यह भी सच्चा प्रतीत हुआ कि उन लोगों के साथ तुलना करके देखें तो पार्वती कहीं अच्छी है और वह स्वयं क़िस्मतवर है। उनकी औरतों की अपेक्षा पार्वती हजारों गुने कहीं भली है।

फिर क्या था, इस प्रकार पंचायत विफल हो गई, साथ ही शिवराम की समस्या हल हो गई। उसी वक़्त शिवराम पार्वती को साथ ले अपने गाँव चला गया। इसके बाद फिर कभी उस दंपति के बीच कोई झगड़ा उत्पन्न न हुआ।

झूठी तारीफ़ की दवा

प्राचीन काल में एक गाँव में जगन्नाथ नामक एक व्यक्ति था। वह छोटी-सी बात पर अकारण बिगड़ उठता था, लेकिन उसकी एक कमजोरी थी। वह अपनी तारीफ़ पाकर पिघल उठता था।

जगन्नाथ का पड़ोसी बूढ़ा जब-तब उससे उधार लिया करता था। मगर जब उधार चुकाने का वक़्त आता तब बूढ़े की पत्नी जो जगन्नाथ की कमजोरी से परिचित थी, उसकी तारीफ़ करती, पुराना कर्ज चुकाने के बजाय थोड़े से और रुपये ले जाती।

वह कहती—"बेटा, पुराने कर्ज के साथ ये रुपये भी जोड़कर एक साथ अगले महीने चुका दूँगी। मैं जानती हूँ कि तुम्हारा मन मक्खन के समान कोमल है।" बूढ़ी की बातें सुन जगन्नाथ फूला न समाता और थोड़े रुपये और देकर उसे भेज देता। जगन्नाथ की इस कमजोरी को देख उसकी पत्नी खीझ उठती थी।

इस प्रकार कई महीने गुज़र गये। बूढ़ी अकसर जगन्नाथ के घर आती, कभी बूढ़े के बीमार होने की बात कहती, कभी किसी ज़रूरी खर्च का बहाना बनाती, पुराना कर्ज चुकाने के बदले फिर उधार लेती, जगन्नाथ की झूठी तारीफ़ करके चल देती। वह भी खुश हो जाता। रुपये देकर बूढ़ी को भेज देता। जगन्नाथ की पत्नी मन ही मन नाराज़ हो जाती, पर बूढ़ी की इस आदत को छुड़ाने का उसे कोई उपाय न सूझता।

उन्हीं दिनों में जगन्नाथ का मामा उसके घर आया। उस वक़्त जगन्नाथ घर पर न था। जगन्नाथ की पत्नी ने अपने पति की कमजोरी उसके सामने रखी। उस दिन रात को भोजन के बाद

सुमन दत्त

मामा ने जगन्नाथ और उसकी पत्नी को पास बिठाया और कहा–"मुझे अपने जगन्नाथ को देखने पर बड़ा संतोष होता है। यह अपने बाप-दादों की संपत्ति बरबाद किये बिना बड़ी युक्ति के साथ अपनी गृहस्थी को चला रहा है। इसी की उम्र का मेरे चचेरे भाई ने अपनी सारी संपत्ति कर्जदारों के हवाले कर दी है।"

इस पर जगन्नाथ की पत्नी ने पड़ोसी वृद्ध दंपति की कहानी सुनाकर बताया कि वे लोग उधार तो ले जाते हैं पर लौटाने का कभी नाम तक नहीं लेते।

ये बातें सुन जगन्नाथ का मामा ठठाकर हँस पड़ा और बोला–"बेटी, तुम जगन्नाथ को गलत समझ रही हो? यह जो भी काम करता है, भविष्य का ख्याल करके ही करता है। अगले महीने तुम्हारे विवाह की वर्षगांठ पड़ती है। जगन्नाथ ने इस ख्याल से उस वृद्ध दंपति से रुपये वसूल नहीं किया होगा कि एक ही साथ वसूल करके तुम्हारे लिए कोई गहना बनाकर दे! अगर उसने वसूल किया होता तो अब तक वे रुपये खर्च हुए होते।"

इस पर जगन्नाथ ने उत्साह में आकर कहा–"हाँ, हाँ मामाजी! मैं अपनी पत्नी के लिए सोने की चूड़ियाँ बनाना चाहता हूँ, इसीलिए वसूल नहीं किया।"

"लेकिन वे लोग कर्ज चुकाये तब न?" जगन्नाथ की पत्नी ने ताना दिया।

"ऐसी बात नहीं। मेरा भांजा ब्याज सहित सारे रुपये वसूल करेगा।" यों जगन्नाथ को उसके मामा ने उकसाया।

फिर क्या था, जगन्नाथ वृद्ध दंपति के घर गया। डरा-धमकाकर अपना कर्ज ब्याज सहित वसूल कर लाया। जगन्नाथ का मामा तब तक उसके घर रहा, जब तक उसने अपनी पत्नी के लिए चूड़ियाँ बनाकर नहीं दीं।

इसके बाद जगन्नाथ की पत्नी ने अपने पति के मामा के प्रति न केवल कृतज्ञता प्रकट की, बल्कि यह भी जान लिया कि झूठी तारीफ़ की दवा झूठी तारीफ़ ही है।

कुत्ते की पूँछ

श्रृंगेरी नामक गाँव में एक दानी ने गरीब ब्राह्मणों के वास्ते एक सराय बनाई। उस सराय में रोज पांच ब्राह्मणों को मुफ़्त भोजन कराया जाता था। यात्रा पर जानेवाले ब्राह्मण उस सराय में दस दिन तक ठहर सकते थे। ऐसे लोगों को भोजन के साथ एक एक रुपया प्रति दिन दक्षिणा भी दी जाती थी।

श्रृंगेरी के समीप के एक गाँव में नारायण भट्ट नामक एक ब्राह्मण था। वह गरीब न था, पर लोभी था, उसके मन में यह दुर्बुद्धि पैदा हुई कि महीने भर श्रृंगेरी की सराय में बिताया जाय तो एक महीने का भोजन खर्च बच जाता है और साथ ही तीस रुपये आसानी से कमाये जा सकते हैं। लेकिन सराय के नियम के अनुसार एक व्यक्ति को दस दिन से अधिक सराय में ठहरने का क़ायदा न था। इसलिए उसने कोई युक्ति सोची, तदनुसार अपना वेष बदलकर बैरागी की भांति दाढ़ी, मूंछ व केश बढ़ाकर श्रृंगेरी की सराय में जा ठहरा।

सराय में ब्राह्मणों को भोजन व दक्षिणा का प्रबंध करने के लिए कृष्णचन्द्र नामक एक मुनीम नियुक्त था। वह उसी गाँव के हनुमान मंदिर का भी पुजारी था। उस मंदिर की कोई आमदनी न थी। मंदिर में रोशनी का प्रबंध करने के ख्याल से कृष्णचन्द्र ने सराय के भीतर एक हुंडी की व्यवस्था की।

कृष्णचन्द्र जब तक सराय में रहता, तब तक वह हुंडी उसकी मेज़ पर रहती। वह जब भी ब्राह्मणों में दक्षिणा बांट देता, तब उन यात्रियों से निवेदन करता कि अपनी इच्छा से थोड़े पैसे हुंडी में डाल दे। एक रुपया दक्षिणा पानेवाले व्यक्ति

कुमारी चन्द्रकला

अपनी इच्छा से थोड़े बहुत पैसे ज़रूर उस हुंडी में डाल देते, लेकिन पक्का लोभी नारायण भट्ट हुंडी में एक भी पैसा डालता न था।

दस दिन बीत गये। ग्यारहवें दिन नारायण भट्ट सवेरे जाग उठा। सराय से बाहर निकल गया, अपनी दाढ़ी मुंडवाकर अपनी वेष-भूषा और नाम भी बदल डाला और दस दिन उसी सराय में बिता दिया। बीस दिन बाद सिर व मूँछें मुंडवाई, नाम बदलकर दस दिन उसी सराय में और रहा।

महीने के अंत में नारायण भट्ट भोजन करके अपने गाँव जाने की तैयारी कर रहा था, तभी कृष्णचन्द्र सिपाहियों को साथ लेकर वहाँ आया। नारायण भट्ट को न्यायाधिकारी के पास ले गया और उसके अपराध की फ़रियाद की।

न्यायाधिकारी ने कृष्णचन्द से पूछा— "भाई, तुम यह तो बताओ कि नारायण भट्ट ने जब अपना वेष और नाम भी बदल डाले तो तुमने उसे कैसे पहचान लिया?"

इस पर कृष्णचन्द्र ने उत्तर दिया— "वेष और नाम भले ही बदल जाय पर गुण तो नहीं बदलता है न हुज़ूर! इस नारायण भट्ट ने पहले दस दिन तक हुंडी में एक भी पैसा नहीं डाला। वेष व नाम बदलने के बाद भी एक भी पैसा हुंडी में नहीं डाला। इस पर मेरे मन में संदेह हुआ और मैंने बड़ी सावधानी से इसकी जांच की। मैं यह सोचकर इंतज़ार करता रहा कि देखें कि यह कितने दिन और इस प्रकार धोखा देता रहेगा। एक महीने के बाद जब यह जाने की तैयारी कर रहा था, तब पता लगाकर मैं इन्हें आप की सेवा में ले आया।"

न्यायाधिकारी ने नारायण भट्ट को पाँच सौ रुपये का जुर्माना लगाया। इस पर दोनों गाँवों के लोग यह सोचकर खुश हुए कि चलो, ऐसे लोभी नारायण भट्ट को उचित सजा मिल गई है।

हनुमान ने सूक्ष्म रूप में बेरोकटोक पाताल लंका के सिंहद्वार को पारकर नगर में प्रवेश किया। उसे एक दिशा में कोलाहल सुनाई दिया, अत: वह उसी दिशा की ओर बढ़ा।

एक स्थान पर पर्वत की एक बड़ी गुफा को अद्‌भुत शिल्प के साथ काली माता के मंदिर का रूप दिया गया था। मंदिर का प्रांगण तोरणों तथा मणिमय दीप कांतियों के साथ प्रकाशमान था। मैरावण के सेवक अनेक राक्षस मद्य से भरे बर्तनों को सजाते, गाते, नाचते कोलाहल कर रहे थे।

मंदिर के सामने ढफलियों, डमरुओं तथा अन्य वाद्यों का वादन हो रहा था। हनुमान ने भांप लिया कि प्रात:काल ही राम और लक्ष्मण की बलि काली माता को दी जानेवाली है। वह तत्काल छिपकली बनकर काली माता के मंदिर के गर्भगृह पर पहुँच गया। वहाँ पर काली माता की मूर्ति के चरणों का अभिषेक करने के लिए तैयारियाँ हो रही थीं। मूर्ति के सामने एक गोल छेद था। हनुमान ने उसे छेद में से गर्भगृह में देखा।

काली माता की मूर्ति उग्र रूप में अत्यंत विशाल थी। हनुमान मूर्ति के सामने खड़े हो रौद्र रूप में गरज उठा– "हे महा काली! क्या आप राम और लक्ष्मण की ही सचमुच बलि चाहती हैं?"

पैमाने पर तैयारियाँ हो रही थीं। रनिवास की अधिकारिणी कंटकी नामक राक्षसी चन्द्रसेना का अलंकार कर थी। वह जब-तब चन्द्रसेना के कपोल पर चुटकी मारते मैरावण की महानता का बखान कर रही थी।

महल के प्रांगण में अत्यधिक कोलाहल प्रारंभ हुआ। राम और लक्ष्मण प्रतिमाओं की आकृति से पूर्व रूप को बदल दिये गये। उन दोनों को एक गाड़ी पर लंबी लकड़ियों के साथ रस्सों से बांध दिया गया। उनके शरीर जपा पुष्पों से अलंकृत किये गये। गाड़ी को पैरोंवाले भूत सर्प खींच रहे थे। राक्षस राम और लक्ष्मण का जुलूस निकालकर उन्हें काली माता के मंदिर में ले जा रहे थे।

राक्षसों की चिल्लाहटें सुनकर चन्द्रसेना ने उसका कारण जान लिया। वह झट से उठ बैठी। कंटकी ने उसे रोकने का प्रयत्न किया, पर इस बीच महल का प्रांगण पार करके चन्द्रसेना पथ पर जा पहुंची। उसने देखा, रामचन्द्रजी को हल्दी में रंगे कपड़े पहनाये गये हैं और उनके मुखमण्डल पर लाल सिंदूर पोता गया है, इस रूप में रामचन्द्रजी को देख चन्द्रसेना का कलेजा कांप उठा और वह बेहोश हो गई।

दूसरे ही क्षण काली माता सौम्य रूप में प्रत्यक्ष हो बोलीं–"हे हनुमान, मैरावण की आयु की समाप्ति का समय निकट आ गया है। तुम्हारी विजय होगी।" यों आशीर्वाद देकर काली माता अदृश्य हो गई। ये बातें सुन हनुमान अधिक प्रसन्न हो उठा। उसने गर्भगृह के भीतरी द्वार बंद किये, काली माता की मूर्ति के पीछे पहुँचकर आगे के कार्य का निरीक्षण करने लगा।

उस समय मैरावण के रनिवास में अत्यंत कोलाहल हो रहा था। वहाँ पर राम-लक्ष्मण की बलि के उपरांत चन्द्रसेना के साथ मैरावण के विवाह के वास्ते भारी

चन्द्रसेना का पीछा करनेवाली राक्षसी कंटकी उस दृश्य को देख चन्द्रसेना पर कुपित हो उठी और बेहोशी की हालत में पड़ी चन्द्रसेना को चाबूक से अंधाधुंध पीटने लगी। मगर बड़ी देर तक चन्द्रसेना में कोई चेतना न देख कंटकी ऊब उठी और उसे उठा ले जाकर उस महल के एक कक्ष में बन्दी बनाया।

कंटकी काली माता के चरण-तीर्थ की प्रधान अर्चकी है। इसलिए वह अपने कार्य को संपन्न करने के लिए मंदिर की ओर दौड़ पड़ी। क्योंकि मैरावण या अहिरावण को भी देवी के चरण-तीर्थ कहे जानेवाले मद्य का पान कंटकी के हाथों से ही करना पड़ता था।

उधर राक्षसों ने काली माता का अभिषेक मद्य से करना प्रारंभ किया। गोल छिद्र से धारा के रूप में गिरनेवाले मद्य को देख हनुमान घृणा से भर उठा। उसने गर्भालय की ऊँचाई तक अपनी देह का विस्तार करके गंभीर स्वर में काली माता के रूप में कहा-"अब तुम लोग मद्य का अभिषेक त्यागकर दूध से अभिषेक करो।"

हनुमान के मुँह से ये शब्द निकलने की देरी थी, बस, मंदिर के बाहर हठात् कोलाहल बंद हो गया। सारे राक्षसों

को इस बात का आश्चर्य होने लगा कि काली माता आज मद्य का तिरस्कार क्यों कर रही है? सोमसूत्र से होकर तीर्थकुंड में गिरनेवाले मद्य का पान करने के लिए पान-पात्रों के साथ राक्षस तैयार खड़े थे। इसलिए उन्हें बड़ी निराशा हुई।

गाड़ी पर रस्सों से बंधे रामचन्द्रजी लक्ष्मण की ओर देख मुस्कुरा उठे। कंटकी ने मैरावण की ओर चिंतापूर्ण दृष्टि डाली। मैरावण ने आश्चर्य के साथ विस्फारित नेत्रों से अहिरावण की ओर देखा। अहिरावण ने सिर हिलाकर यों कहा-"मेरे छोटे भाई मैरावण! इसमें आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है।
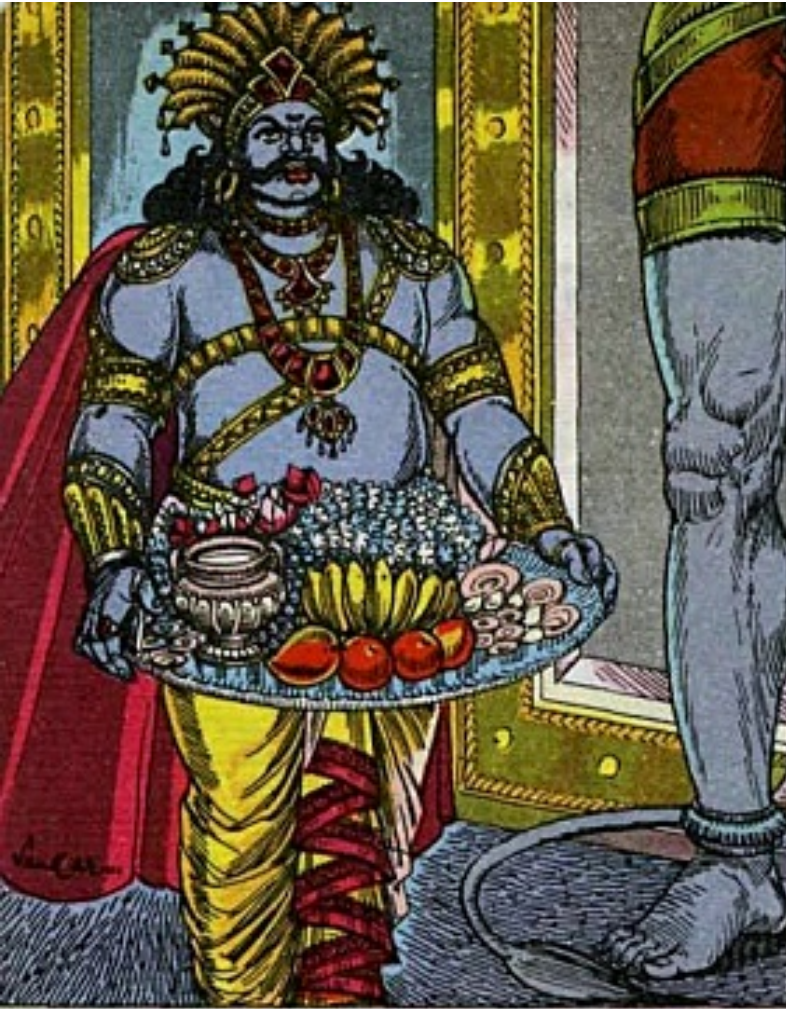
राम और लक्ष्मण तो सात्विक स्वभाव के हैं। इसीलिए देवी दूध चाहती हैं।"

"भैया, तुमने खूब कहा। प्रति नित्य देवी के चरण-तीर्थवाले मद्य का पान करनेवाले हो, इसलिए तुम देवीजी के हृदय को अच्छी तरह से जान सकते हो। हम लोग कैसे जाने?" इन शब्दों के साथ मैरावण ने अहिरावण की तारीफ़ की और राक्षसों को आदेश दिया कि वे दूध से ही देवीजी का अभिषेक करे।

इस पर बड़े बड़े पात्रों में दूध लाकर राक्षस कालीदेवी का अभिषेक करने लगे। हनुमान तीर्थकुंड के ऊपर स्थित छेद के नीचे मुंह खोलकर धारा के रूप में गिरनेवाले सारे दूध को पीने लगा। इससे उसके शरीर में उत्साह के साथ बल का भी संचार होने लगा।

थोड़ी देर में अभिषेक का कार्य समाप्त हुआ। मैरावण उत्साहपूर्वक गर्भगृह के द्वारों तक पहुँचा, घुटने टेककर बोला—"काली माता! तुम्हारे दर्शन करने के लिए हमें अनुमति दो।"

दूसरे ही क्षण भीतर से गंभीर स्वर में वे शब्द सुनाई दिये—"मैरावण! तुम सबसे पहले अपने बड़े भाई अहिरावण को फल-पुष्प और नैवेद्यों के साथ अर्चना के लिए भेज दो।"

मैरावण ने अपने बड़े भाई के निकट जाकर कहा—"भैया, आप के प्रति देवीजी के मन में अपार वात्सल्य का भाव है। वे तुम्हें नैवेद्यों के साथ मंदिर के भीतर जाने की आज्ञा दे रही हैं।"

इस पर अहिरावण पर्वत जैसी अपनी देह को इधर-उधर हिलाते फल-पुष्प तथा अन्य भक्ष्यों के साथ एक स्वर्ण पात्र में मधु को लेकर द्वार के निकट पहुँचा। हनुमान ने पहले ही भीतर की कुंडी खोल रखी थी। अहिरावण ने ज्यों ही किवाड़ों को ढकेलकर भीतर प्रवेश किया, त्यों ही दोनों किवाड़ चट से बंद हो गये।

मंदिर में प्रवेश करके अहिरावण नैवेद्यों को उतार ही रहा था कि हनुमान ने झट से उसका गला दबाया और कसकर उसे मार डाला। इसके बाद हनुमान फल और भक्ष्यों को भर पेट खा डाला और स्वर्णपात्र में स्थित मधु को पी डाला। अब उसका उत्साह और बढ़ गया। शक्ति भी बढ़ी।

हनुमान ने एक बार चारों तरफ़ नजर डाली, अहिरावण के कलेवर को लात मारकर गर्भगृह के एक अंधेरे कोने में ढकेल दिया, तब कहा—"मैरावण, अब राम और लक्ष्मण को अन्दर भेज दो। मेरे प्रियतम भक्त अहिरावण उनके द्वारा मंत्रसहित सब से पहले मेरी पूजा करायेंगे।" यों कहकर हनुमान ने द्वार की कुंड़ी को फिर से खोल दिया।

इस पर मैरावण ने राम और लक्ष्मण को गर्भमंदिर में ढकेल दिया। काली माता की मूर्ति के पीछे छिपे हनुमान ने कालीदेवी के शब्दों में क्षीण स्वर में यों कहा—"रघुवीरो, किवाड़ों पर कुंड़ी चढ़ा कर तैयार हो जाइए।"

ये शब्द सुनकर लक्ष्मण विस्मय में आ गया और रामचन्द्र की ओर देखा। रामचन्द्रजी ने मंदहास करके कहा—"लक्ष्मण, क्या असली बात तुम्हारी समझ में न आई? पहले तुम किवाड़ों पर कुंड़ी चढ़ा दो।" लक्ष्मण ने ज्यों ही किवाड़ बंद किये, त्यों ही ये शब्द सुनाई दिये—"अब आप लोग मूर्ति के पीछे आ जाइए।"
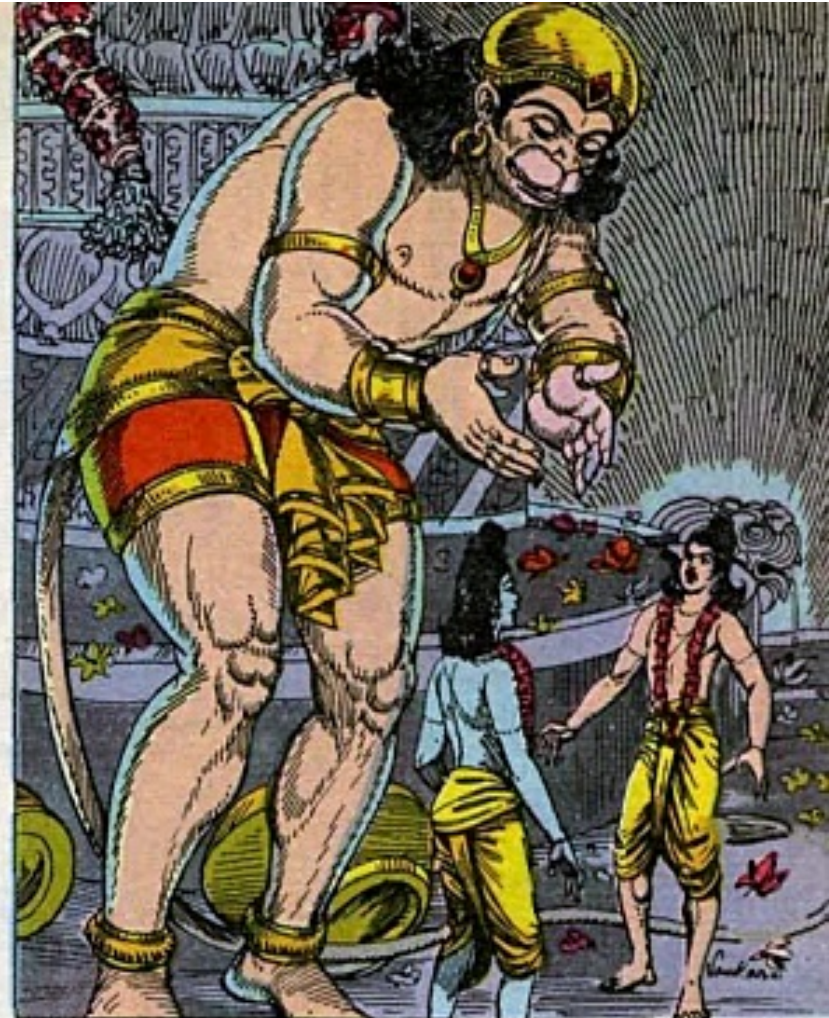
राम और लक्ष्मण काली माता की मूर्ति के पीछे पहुँचे। वहाँ पर हनुमान को देख वे परमानंदित हुए। लक्ष्मण चारों ओर दृष्टि प्रसारित करके विस्मय में डूबा हुआ था, इसे देख रामचन्द्रजी बोले—"लक्ष्मण, जब मैंने सुना कि काली देवी मद्य के साथ अपना अभिषेक नहीं चाहती, तभी मैंने भांप लिया कि मंदिर के गर्भगृह में हमारे हनुमानजी हैं।"

तब जाकर लक्ष्मण की समझ में सारी बातें आ गईं। हनुमान ने उन दोनों को काली माता की मूर्ति के सामने पूजा के वास्ते रखे धनुष और बाण दिखाये। इस पर राम और लक्ष्मण ने धनुष-बाण अपने हाथों में लिये। हनुमान ने अपनी देह का विस्तार किया। राम और लक्ष्मण को अपनी भुजाओं पर बिठा लिया, मूर्ति के सामने स्थित सारे बाणों को गट्ठर के रूप में बांधकर अपने हाथ ले लिया।

गर्भगृह के बाहर राक्षस कोलाहल मचा रहे थे। वे लोग राम और लक्ष्मण की बलि देखने को कुतूहलपूर्वक प्रतीक्षा कर रहे थे। बलि का मुहूर्त बीतता जा रहा था। फिर भी गर्भगृह में स्थित राम और लक्ष्मण को अहिरावण बाहर लाने का कोई प्रयत्न नहीं कर रहा था।

सबसे पहले कंटकी के मन में यह संदेह पैदा हो गया कि गर्भगृह के भीतर कोई धोखा हो गया है। उस राक्षसी ने बड़ी सावधानी से किवाड़ों के छेद में से भीतर देखा। उसे कहीं भी काली माता के अभिषेक किया गया दूध दिखाई न दिया। इसका मतलब था कि गर्भगृह में कोई भयंकर शत्रु का प्रवेश हो गया है।

यों देखते हुए कंटकी चीख उठी। राक्षसों ने उसे घेरकर पूछा—"तुम चिल्लाती क्यों हो? गर्भगृह के भीतर तुम्हें कौन चीज़ दिखाई दी? क्या काली माता ने तुम्हारी बलि तो नहीं माँगी?"

इस बार कंटकी और उच्च स्वर में चिल्ला उठी और बोली—"अरे मूर्खो! हमारी आँखों के सामने ही बड़ा अनर्थ हो गया है। हमारे रहस्यों को शत्रुओं तक पहुँचानेवाली औरत एक ही है, वह चन्द्रसेना है। चाबूक से मार-मारकर उसकी देह शिथिल कर दे! तभी जाकर वह सच्ची बात बतला देगी।" यों चिल्लाते कंटकी चन्द्रसेना के महल की ओर भाग खड़ी हुई।

कंटकी के मुँह से ये शब्द सुनकर राक्षस चिंता में डूब गये। वे परस्पर एक दूसरे
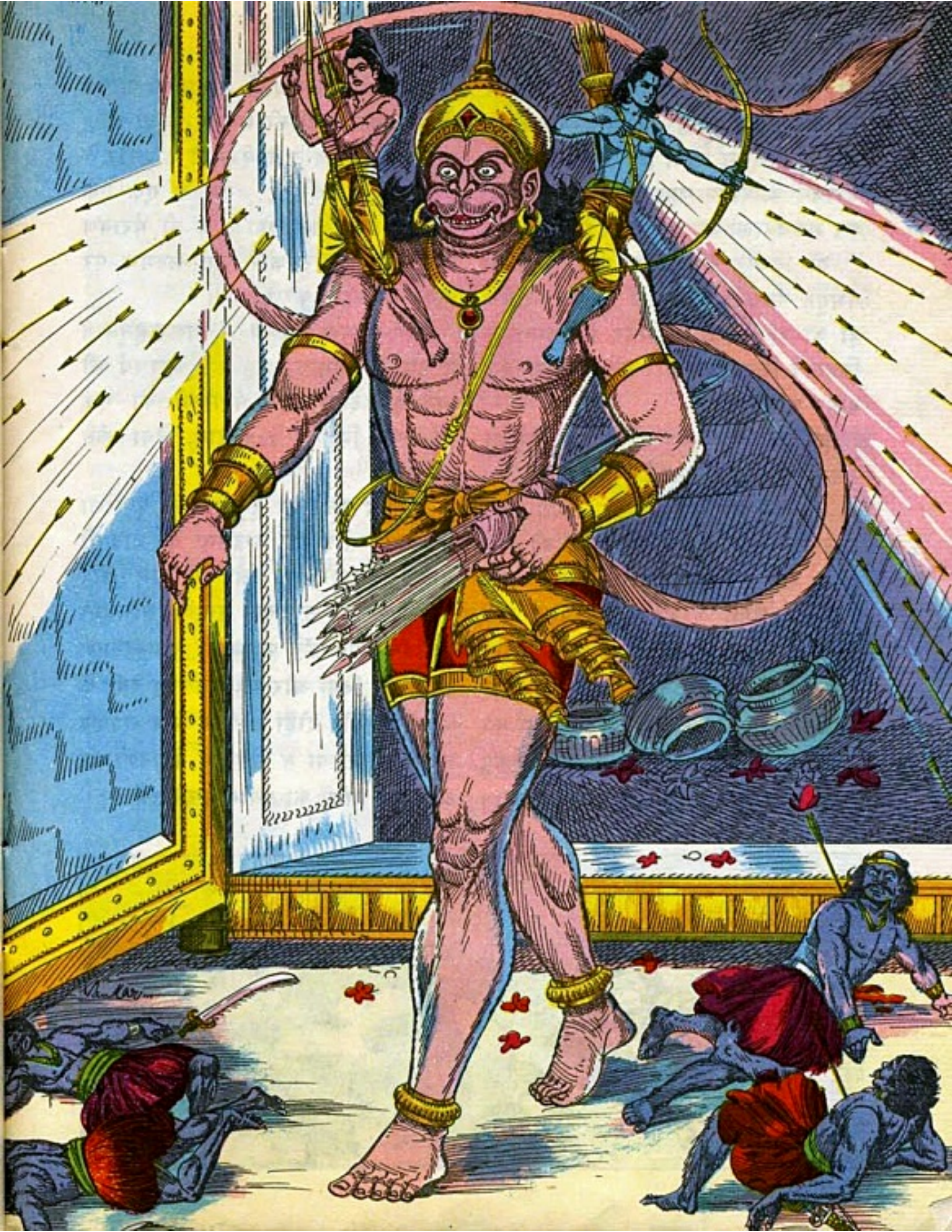
का चेहरा देखने लगे। क्या उस राक्षसी की शंका के अनुसार गर्भगृह के भीतर कोई दुश्मन घुस आया है? मगर महाबली मैरावण के राज्य पाताल लंका में प्रवेश कर सकनेवाला वह शत्रु कौन होगा?

यों विचार करते कुछ साहसी राक्षस गर्भगृह की ओर बढ़े। वे किवाड़ खोलने ही जा रहे थे, तभी भीतर से हनुमान ने सिंहनाद किया और द्वार पर लात मारकर बाहर आ पहुँचा।

हनुमान को देखते ही राक्षस चिल्ला उठे–"धोखा है! दगा है!"

हनुमान की भुजाओं पर स्थित राम और लक्ष्मण ने राक्षसों पर बाणों की वर्षा की। राक्षस हाहाकार करते भागने लगे।

काली माता के मंदिर के सामने खड़े हो अपने प्रमुख अनुचरों के साथ वार्तालाप करनेवाला मैरावण चौंक पड़ा। उसने हनुमान के कंधों पर राम और लक्ष्मण को देख हुंकार किया और धनुष-बाण लेकर उनके साथ युद्ध करने के लिए तैयार हो गया।

राम और लक्ष्मण ने उत्साह में आकर मैरावण पर बाणों की लगातार वर्षा की। उन बाणों की चोट से मैरावण के शरीर से खून की बूंदें गिरीं; उनमें से एक एक मैरावण पैदा होने लगा। वे भी मैरावण की भांति हुंकार करते राम-लक्ष्मण पर बाणों का प्रहार करने लगे।

राम-लक्ष्मण विस्मय में आकर हनुमान से बोले–"हनुमान! यह कैसे आश्चर्य की बात है! इतने सारे मैरावणों का एक भी रक्त बिंदु नीचे गिराये बिना कैसे वध करे?"

ये शब्द सुनने पर हनुमान को सुवर्चला देवी की बताई गई चन्द्रसेना की याद हो आई। हनुमान ने संक्षेप में राम और लक्ष्मण को वह समाचार सुनाया, आसमान में उड़कर एक ऊँचे पहाड़ पर राम-लक्ष्मण को उतार दिया और वह सुवर्चला देवी के भवन की ओर दौड़ा। राम और लक्ष्मण लाखों की संख्या में पैदा हुए मैरावणों पर अंधा-धुंध बाणों का प्रयोग करते रहें।

सरदार वल्लभभाई पटेल

आधुनिक भारत के निर्माताओं में से एक श्री वल्लभभाई पटेल का जन्म क़रीब एक शताब्द पूर्व–६१ अक्तूबर, १८७५ को गुजारत के करमसद नामक गाँव में हुआ था ।

बचपन से ही वल्लभभाई में दृढ़ लगन तथा विपत्तियों का सामना करने की अनुपम शक्ति विद्यमान थी । परिवार की आर्थिक स्थिति अनुकूल न होने पर भी मेहनत के साथ पढ़कर न्याय शास्त्र के विशारद बने । वकालत करते उन्होंने जो धन कमाया, उससे अपने बड़े भाई विट्ठल भाई को लंदन भेजकर बार-एट-ला पढ़ाया । वल्लभभाई ने भी बैरिस्टरी करके अहमदाबाद में वकालत शुरू की ।
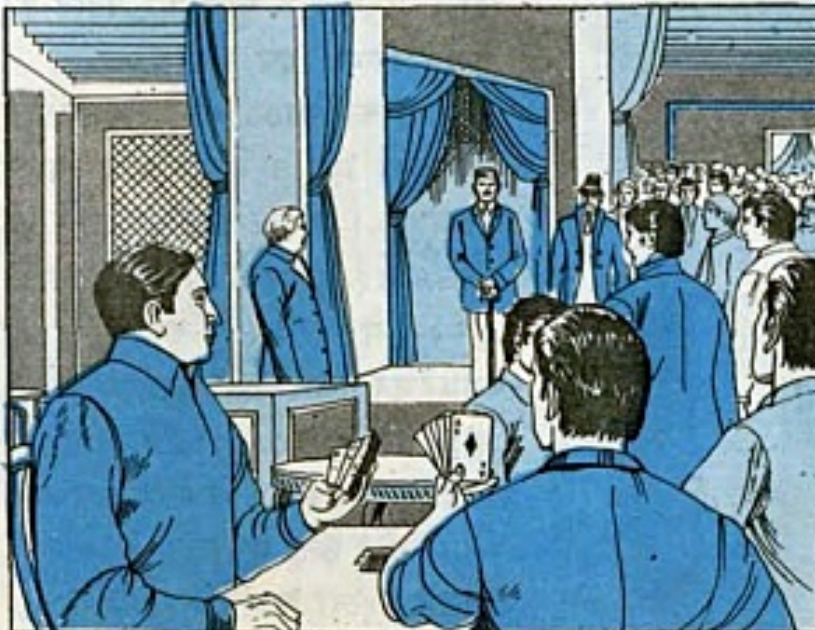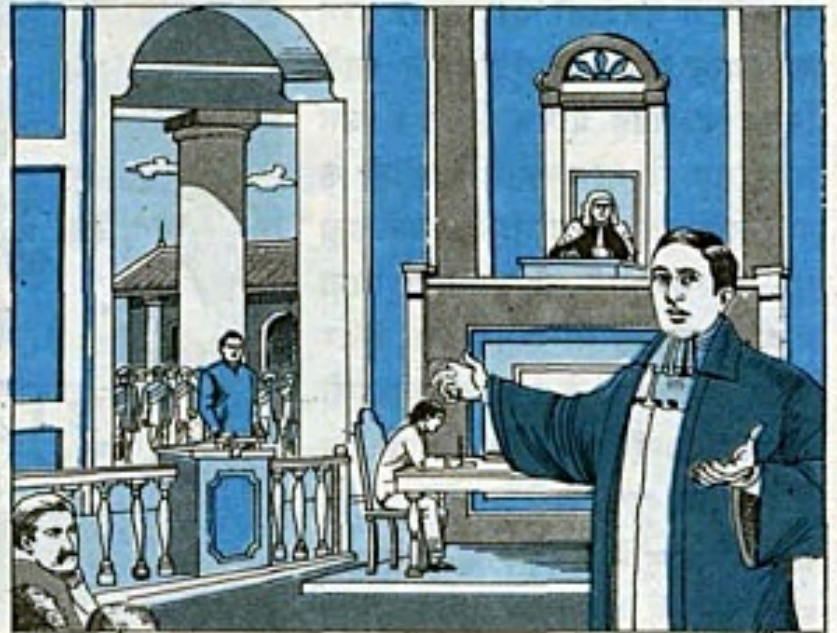
उन दिनों में गांधीजी दक्षिण आफ्रिका से भारत लौटे थे । एक बार गुजरात क्लब में उनका भाषण हुआ । उस समय वल्लभभाई श्रोताओं में थे, पर वे गांधीजी के भाषण से विशेष प्रभावित नहीं हुए ।

इसके थोड़े दिन बाद गांधीजी ने गुजरात के चंपारन जिले में जनता का एक आन्दोलन चलाया। वहाँ के मजदूरों को उनके मालिक न्यायपूर्वक मजदूरी न देकर उनके श्रम को लूट रहे थे। उस आन्दोलन में गांधीजी ने जो लगन एवं साहस का परिचय दिया, उससे वल्लभभाई गांधीजी के प्रति आकृष्ट हुए।

उसी समय खेड़ा जिले में भयंकर अकाल पड़ा। जनता भूख-प्यास से तड़प रही थी, फिर भी ब्रिटीश सरकार ने जबर्दस्ती कर वसूली करने का प्रयत्न किया। गांधीजी ने इसके विरुद्ध सत्याग्रह प्रारंभ किया। उस आन्दोलन में वल्लभभाई गांधीजी के दायें हाथ रहें। गांधीजी ने स्वयं कहा था—"वल्लभभाई की सहायता प्राप्त न होती तो यह आन्दोलन इस प्रकार सफल न होता।" वे एक प्रतिभाशाली राष्ट्रीय आन्दोलन के निर्माता के रूप में विख्यात हुए।

ख़ासकर उन्होंने १९२० के असहयोग आन्दोलन में अभूतपूर्व भूमिका अदा की। सरकार ने भूमि कर बढ़ाने का प्रयत्न किया, इस पर बारडोली के किसानों का संगठन करके वल्लभभाई ने उसका विरोध किया और विजय प्राप्त की। जनता ने उन्हें 'सरदार' वल्लभभाई पुकारना प्रारंभ किया। १९३१ में कराची में कांग्रेस का जो अधिवेशन हुआ उसके सरदार वल्लभ भाई अध्यक्ष रहें। इसके थोड़े ही दिन बाद सरकार ने उन्हें गिरफ़्तार किया और उन्हें एरवाड़ा के जेल में सोलह महीनों तक रखा।

१९३९ में जब द्वितीय विश्व महा संग्राम शुरू हुआ तब ब्रिटीश शासन ने भारत को उस युद्ध में शामिल किया। इससे हमारे नेता असंतुष्ट हुए और कांग्रेस ने यह प्रस्ताव पास किया–"अगर युद्ध में हमारा सहयोग चाहते हैं तो पहले हमारे देश को स्वतंत्रता दीजिए।" साथ ही यह भी नारा लगाया कि ब्रिटीश सरकार को तत्काल हमारे देश को छोड़ चले जाना चाहिए।

इस पर गांधीजी तथा सरदार वल्लभ भाई के साथ हमारे सभी प्रमुख नेता गिरफ्तार किये गये। जनता के विरोध को ब्रिटीश सरकार ने अत्यंत क्रूरतापूर्वक दबाना चाहा। जनता पर निर्दयतापूर्वक गोलियाँ चलाई गईं और सत्याग्रहियों को जेलों में नाना प्रकार से सताया गया।
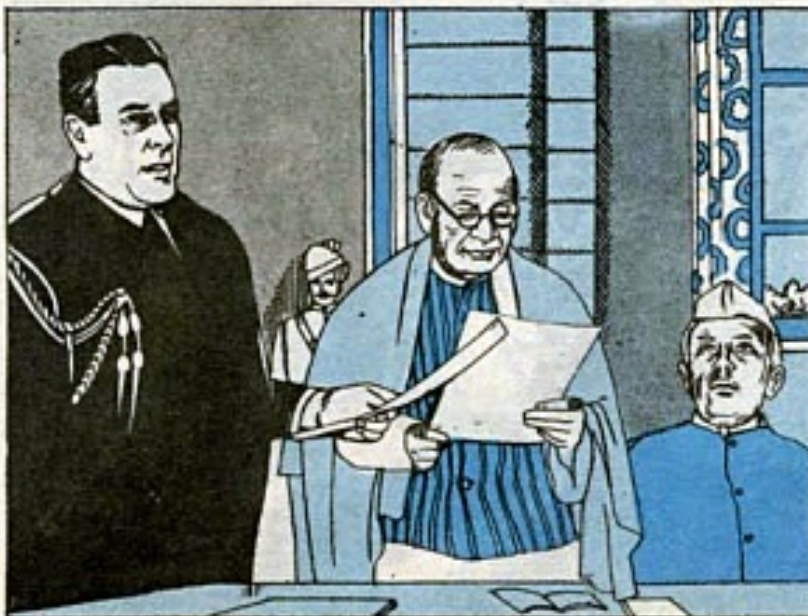
भारतवासियों ने कई दशाब्दों तक स्वतंत्रता की जो लड़ाई लड़ी और जो त्याग किये, उनके परिणाम स्वरूप हमारे देश को १५ अगस्त, १९४७ को आजादी प्राप्त हुई। पं. जवाहर लाल नेहरू हमारे प्रधान मंत्री बने और सरदार पटेल उप प्रधान मंत्री हुए।

भारत जब स्वतंत्र हुआ, उसी वक्त उसे अनेक विषम समस्याओं का सामना करना पड़ा। हमारे देश के अनेक प्रांतों में हिन्दू-मुस्लिम झगड़े हुए। गृहमंत्री के रूप में सरदार पटेल ने बड़ी दक्षता एवं निपुणता का परिचय देकर उन्हें नियंत्रण में रखा।

हमारे देश में छोटे-बड़े सभी मिलकर लगभग छे सौ देशी रियासतें थीं। इनमें से कुछ देशी नरेशों ने ब्रिटीश सरकार के हटते ही स्वतंत्र होने के सपने देखे। किंतु सरदार पटेल ने अपने दृढ़ निर्णय एवं कठिन कार्यक्रमों के द्वारा सभी रियासतों को रद्द करके उन्हें एक ही शासन के अंतर्गत प्रतिष्ठित किया।

इस प्रकार सरदार वल्लभभाई पटेल ने राष्ट्रीय जीवन के क्षेत्र में असंख्य विघ्न-बाधाओं का सामना कर विजय प्राप्त की। यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि भारत में उत्पन्न महान व्यक्तियों में सरदार पटेल एक हैं। उनका निधन १९५० में हुआ, पर देश की स्वतंत्रता के वास्ते सरदार पटेल ने जो त्याग किये, वे सदा सर्वदा स्मरणीय हैं।

कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता

कहानी का सुंदर शीर्षक देकर रु. २५ जीतिए!

?

एक बार कुछ समुद्री व्यापारियों ने समुद्र के बीच एक टापू को देखा। पचास वर्षों से उस मार्ग में नाव चलानेवाले नाविकों ने भी उस प्रदेश में उस टापू को देखा न था।

नाव के मालिक ने उस टापू के किनारे लंगर डाला। व्यापारी इस टापू में गये। वहाँ पर एक नगर था, जनता थी और वे लोग अनेक प्रकार से अपना जीवन व्यतीत करते थे।

लेकिन व्यापारियों को किसी ने नहीं पहचाना। व्यापारियों ने कुछ लोगों को पुकारा, पर किसी ने कोई उत्तर नहीं दिया। व्यापारी उन मनुष्यों का स्पर्श भी नहीं कर पाये। इसे देख वे लोग आश्चर्य में आ गये और राज महल में पहुँचे। राजा का दरबार लगा हुआ था।

नौका का मालिक जानता था कि उसे कोई पहचान न सकेगा, वह सीधे राजा के पास गया, उसकी आँखों में देखा, फिर क्या था,-दूसरे ही क्षण राजा निश्चेष्ट हो गिर पड़ा।

दरबारी मांत्रिक ने आकर राजा की जांच करके कहा-"जीवित व्यक्तियों की हवा राजा को लग गई है, मैं उनका मारण होम करूँगा।"

ये बातें सुनते ही व्यापारी भाग गये, अपनी नौका पर सवार हो अपने रास्ते चले गये। उन लोगों ने थोड़ी दूर जाने के बाद मुड़कर देखा, वहाँ पर टापू न था।

★ ★ ★

उपर्युक्त कहानी के लिए बढ़िया शीर्षक कार्ड पर लिखकर, निम्न लिखित पते पर भेजें-"कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता", चन्दामामा, २ & ३, आर्काट रोड, मद्रास-६०००२६

कार्ड हमें मई १० तक प्राप्त हों और उसमें फोटो-परिचयोक्तियाँ न हों। इसके परिणाम चन्दामामा के जुलाई '७७ के अंक में घोषित किये जायेंगे।

मार्च मास की प्रतियोगिता का परिणाम: "आदत से मजबूर"

पुरस्कृत व्यक्ति: मीना आर. कववानी, ३४/१३५ ए, वारसिया कैम्प, बरोडा (गुजरात)

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जुलाई १९७७ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

D. A. Narasimha Raju.

★

D. Jagdish Chandra.

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ मई १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

मार्च के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो: थक गई काया

द्वितीय फोटो: सिमट गई छाया

प्रेषक: कृष्ण गोपाल शर्मा, द्वारा टी. एस. एल. पो. बा. नं. ६९, भटिण्डा (पंजाब)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे। आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

खबर है ये आज की ताजा,
सर्कस से एक हाथी भागा.

रहना होगा हमें सावधान

मुसीबत में पड़ गये दोनों साथी

रास्ते भर पॉपिन्स बिखराते चलो तुम; फिर पीछे-पीछे हाथी और आगे आगे हम.

राम श्याम ने करतब दिखाया,
सर्कस का हाथी वापस लौटाया.

फलों के स्वादवाली गोलियों को जान गये; मान गये, मान गये, पॉपिन्स को मान गये.

रसीली
प्यारी
मज़ेदार

फलों के स्वादवाली गोलियां

५ फलों के स्वाद— रासबेरी, अनन्नास, नींबू, नारंगी व मोसंबी.

everest/871/PP-hn